जय माँ अम्बे

माँ दुर्गा के नवरात्रों

का नौ दिन का पाठ

(दुर्गा-पाठ)

चैत्रमास और आश्विन मास
के नवरात्रों की सरल पूजा
सम्पूर्ण कथा विधान
चालीसा एवं आरती
तारारानी कथा सहित

॥ श्री दुर्गायै नमः ॥

नवरात्रों में

नौ दिन का देवी पाठ

चैत्र एवं आश्विन नवरात्रों में विधि-विधान सहित नवदुर्गा के पूजन और माहात्म्य को समझाने वाली एकमात्र पुस्तक श्री दुर्गा चालीसा, विंध्येश्वरी चालीसा, विंध्येश्वरी स्तोत्र, तारा रानी की कथा एवं आरतियों सहित।

प्रकाशक :

महालक्ष्मी प्रकाशन

1-ए, माता शेरावाली मार्किट, पुल कुतुब रोड, सदर बाजार, दिल्ली-110006

☎: 011-23550395

अनुक्रमणिका

दुर्गा-पूजा पाठ विधि 3
पूजन सामग्री 4
प्रार्थना 6
पहला दिन : शैलपुत्री 7
नव दुर्गा प्रार्थना 8
अथ देवी कवच 9
श्री अर्गला स्तोत्र 18
श्री कीलक स्तोत्र 22
रात्रि सूक्त 26
दूसरा दिन : ब्रह्मचारिणी 28
पहला अध्याय 29
दूसरा अध्याय 41
तीसरा दिन : चन्द्रघण्टा 51
तीसरा अध्याय 52
चौथा अध्याय 58
चौथा दिन : कूष्माण्डा 67
पांचवाँ अध्याय 68
छठा अध्याय 79
पांचवाँ दिन : स्कन्दमाता 82
सातवाँ अध्याय 83
आठवाँ अध्याय 86
छठा दिन : कात्यायनी 95
नौवाँ अध्याय 96
दसवाँ अध्याय 101
सातवाँ दिन : कालरात्रि 107
ग्यारहवाँ अध्याय 108
बारहवाँ अध्याय 116
आठवाँ दिन : महागौरी 122
तेरहवाँ अध्याय 123
देवी सूक्त 125
अपराध क्षमापन स्तोत्र 128
सिद्धकुंजिका स्तोत्र 132
नवरात्रों में कन्या पूजन 134
नौवाँ दिन : सिद्धिदात्री 136
माँ का भोग 137
श्री दुर्गा चालीसा 139
श्री विन्ध्येश्वरी चालीसा 143
श्री विन्ध्येश्वरी स्तोत्र 147
श्री दुर्गाजी के १०८ नाम 148
तारा रानी की कथा 149
श्री दुर्गा जी की आरती 158
श्री अम्बा जी की आरती 159
श्री विन्ध्येश्वरी देवी जी की आरती 160

दुर्गा-पूजा पाठ विधि

श्री दुर्गा-पूजा विशेष रूप से प्रतिवर्ष दो बार चैत्र व आश्विन माह के शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से प्रारम्भ होकर नवमी तक चलती है। दुर्गा देवी के नौ स्वरूपों की पूजा होने के कारण नवदुर्गा तथा नौ तिथियों में पूजन होने से इन्हें नवरात्र कहा जाता है। चैत्र मास के नवरात्र 'वार्षिक नवरात्र' और आश्विन मास के नवरात्र 'शारदीय नवरात्र' कहे जाते हैं।

माँ दुर्गा के साधक भक्त स्नानादि से शुद्ध होकर, शुद्ध वस्त्र धारण कर सर्वप्रथम पूजास्थल को सजाएँ। फिर मण्डप में श्री दुर्गाजी की मूर्ति स्थापित करनी चाहिए। मूर्ति के दायीं ओर कलश की स्थापना करनी चाहिए तथा कलश के सम्मुख मिट्टी, बालू व रेत मिलाकर जौ बोने चाहिए। मण्डप के पूर्व कोण में दीपक की स्थापना करनी चाहिए। पूजन में सबसे पहले गणेश

जी का पूजन करके सभी देवी-देवताओं का पूजन करें। तत्पश्चात जगदम्बा का पूजन करें।

श्री दुर्गा सप्तशती का पाठ न तो जल्दी-जल्दी करना चाहिए और न बहुत धीरे-धीरे। पाठ करते समय एक ही आसन पर अचल बैठना चाहिए।

पूजन सामग्री

जल, गंगाजल, पंचामृत, दूध, दही, घी, शहद, शक्कर, रेशमी वस्त्र, उपवस्त्र, नारियल, चन्दन, रोली, कलावा, अक्षत, पुष्प, पुष्पमाला, धूप, दीप, नेवैद्य, ऋतुफल, पान, सुपारी, लौंग, इलायची, कर्पूर, आसन, चौकी, पूजन पात्र, आरती, कलश।

नवदुर्गा की प्रार्थना करने से पहले मस्तक पर भस्म, चन्दन, रोली, का टीका लगाना चाहिए। नवदुर्गा की प्रार्थना के पश्चात् दुर्गा कवच का पाठ

करना चाहिए। इसके बाद अर्गला स्तोत्र और कीलक का पाठ करें। तत्पश्चात् रात्रिसूक्त का पाठ करें। इतना कर लेने के बाद सप्तशती का पाठ प्रारम्भ करना चाहिए।

श्री दुर्गा सप्तशती का पाठ १३ अध्यायों में वर्णित है। इन १३ अध्यायों में माँ भगवती के तीन चरित्रों का वर्णन है।

प्रथम चरित्र--पहले अध्याय में 'मधु व कैटभ' नामक दो राक्षसों के वध का वर्णन है।

द्वितीय चरित्र--इसमें दूसरे अध्याय से चतुर्थ अध्याय तक महिषासुर नामक राक्षस के वध का वर्णन किया गया है।

तृतीय चरित्र--इसमें पंचम अध्याय से ग्यारहवें अध्याय तक शुम्भ-निशुम्भ आदि राक्षसों के वध का वर्णन किया गया है।

बारहवें अध्याय में आदिशक्ति माँ के तीनों चरित्रों का पाठ करने का महत्व बताया गया है।

तेरहवें अध्याय में राजा सुरथ एवं समाधि नामक वैश्य को देवी द्वारा दिए वरदानों का वर्णन किया गया है।

नौ दिनों में इन १३ अध्यायों का पाठ करके अन्तिम दिन माँ का भोग, दुर्गा चालीसा, विन्ध्येश्वरी चालीसा, विन्ध्येश्वरी स्तोत्र एवं आरती करके समापन करना चाहिए।

प्रार्थना

हे करुणामयी, जगजननी, स्नेहमयी एवं आनन्द देने वाली माँ ! आपकी सदा जय हो। हे जगदम्बे ! पंखहीन पक्षी और भूख से बिलबिलाते बच्चे जिस प्रकार अपनी माँ की प्रतीक्षा करते हैं, उसी प्रकार मैं भी आपकी दया की प्रतीक्षा कर रहा हूँ। हे अमृतमयी माँ ! आप शीघ्रताशीघ्र मुझे दर्शन देने की कृपा करें। मुझे ऐसी बुद्धि प्रदान करें, जिससे मैं आपका रहस्य जान सकूँ।

१

पहला दिन : शैलपुत्री

वन्दे वांछितलाभाय चन्द्रार्धकृतशेखराम्।
वृषारूढां शूलधरां शैलपुत्रीं यशस्विनीम्॥

देवी दुर्गा का पहला स्वरूप शैलपुत्री का है। पर्वतराज हिमालय के यहाँ पुत्री के रूप में उत्पन्न होने के कारण इनको शैलपुत्री कहा गया। यह वृषभ पर आरूढ़, दाहिने हाथ में त्रिशूल और बाएं हाथ में कमल पुष्प धारण किए हुए हैं। यह नवदुर्गाओं में प्रथम हैं। नवरात्र पूजन में पहले दिन इन्हीं का पूजन होता है। प्रथम दिन की पूजा में योगीजन अपने मन को 'मूलाधार' चक्र में स्थित करते हैं। यहीं से उनकी योग-साधना आरंभ होती है।

पाठ प्रारम्भ

नव दुर्गा प्रार्थना

जय-जयकार करो माता की, आओ शरण भवानी की। एक बार सब प्रेम से बोलो, जय दुर्गे महारानी की।।
पहली देवी शैलपुत्री हैं, किए बैल पर सवारी। अर्धचन्द्र माथे पर सोहे, सुन्दर रूप मनोहारी।।
लिए कमण्डल फूल कमल और रुद्राक्षों की माला। हुईं दूसरी ब्रह्मचारिणी, करें जगत में उजियारा।।
पूर्णचन्द्रमा सी शोभित हैं देवी चन्द्रघण्टा माता। इनके सुमिरन से निर्बल भी, सबल शत्रु पर जय पाता।।
चौथी देवी कूष्माण्डा हैं, इनकी लीला है न्यारी। अमृत भरा कलश है कर में, किए बाघ की सवारी।।
कर में कमल सिंह पर आसन, सबका शुभ करने वाली। मंगलमयी स्कन्दमाता हैं, जग के दुःख हरने वाली।।
मुनि कात्यायन की कन्या हैं, सबकी कात्यायनी माँ। दानवता की शत्रु और मानवता की सुखदायनी माँ।।
सप्तम कालरात्री देवी हैं, महाप्रलय ढाने वाली। प्राणीमात्र की रक्षा करतीं, महाकाल को खाने वाली।।
श्वेत बैल है वाहन जिनका, तन पर श्वेताम्बर माला। यही महागौरी देवी हैं, सबकी जगदम्बा माता।।
शंख, चक्र और गदा पद्म, कर में धारण करने वाली। यही सिद्धिदात्री देवी हैं, ऋद्धि-सिद्धि देने वाली।।
जय कल्याणमयी नवदुर्गे, जय हो शक्तिदायिनी माँ। जयति-जयति चण्डी नवदुर्गे, जय गिरिजा महारानी माँ।।

अथ देवी कवच

श्री मार्कण्डेय जी बोले–पितामह ! जो इस संसार में परम गुप्त तथा मनुष्यों की सब प्रकार से रक्षा करने वाला है और जो अब तक आपने किसी अन्य के सामने प्रकट नहीं किया हो, ऐसा कोई साधन मुझे बताइये।

ब्रह्मा जी बोले–ब्रह्मन् ! ऐसा साधन तो एक देवी का कवच ही है, जो गुप्त से भी परम गुप्त, पवित्र तथा सम्पूर्ण प्राणियों का उपकार करने वाला है। महामुने ! उसे सुनो।

देवी की नौ मूर्तियाँ हैं, जिन्हें 'नवदुर्गा' कहते हैं। उनके पृथक-पृथक नाम इस प्रकार हैं–

प्रथम नाम शैलपुत्री है। दूसरी मूर्ति का नाम ब्रह्मचारिणी है। तीसरा स्वरूप चन्द्रघण्टा के नाम से प्रसिद्ध है। चौथी मूर्ति को कूष्माण्डा कहते हैं। पाँचवीं दुर्गा का नाम स्कन्द माता है। देवी के छठे रूप को कात्यायनी कहते है। सातवाँ कालरात्रि और आठवाँ स्वरूप महागौरी के नाम से प्रसिद्ध है। नवीं दुर्गा का

नाम सिद्धिदात्री है। ये सब नाम सर्वज्ञ महात्मा वेद भगवान् के द्वारा ही प्रतिपादित हुए हैं।

जो मनुष्य अग्नि में जल रहा हो, रणभूमि में शत्रुओं से घिर गया हो, विषम संकट में फँस गया हो तथा इस प्रकार भय से आतुर होकर जो भगवती दुर्गा के शरण में प्राप्त हुए हों, उनका कभी कोई अमङ्गल नहीं होता। युद्ध के समय संकट में पड़ने पर भी उनके ऊपर कोई विपत्ति नहीं दिखाई देती। उन्हें शोक, दुःख और भय की प्राप्ति नहीं होती।

जिन्होंने भक्तिपूर्वक देवी का स्मरण किया है, वह निश्चय ही वृद्धि को प्राप्त होते हैं। देवेश्वरी ! जो तुम्हारा चिन्तन करते हैं, उनकी तुम निःसंदेह रक्षा करती हो। चामुण्डा देवी प्रेत पर आरूढ़ हैं। वाराही भैंसे पर सवारी करती हैं। ऐन्द्री का वाहन ऐरावत हाथी है। वैष्णवी देवी गरुड़ पर आसन जमाती हैं।

माहेश्वरी वृषभ पर आरूढ़ होती है। कौमारी का वाहन मयूर है। भगवान् विष्णु की प्रियतमा लक्ष्मीदेवी कमल के आसन पर विराजमान हैं और वह हाथों में कमल धारण किये हुए हैं।

वृषभ पर आरूढ़ ईश्वरी देवी ने श्वेतरूप धारण कर रखा है। ब्राह्मी देवी हंस पर बैठी हुई हैं और सब प्रकार के आभूषणों से विभूषित हैं।

इस प्रकार ये सभी देवियाँ सब प्रकार की योगशक्तियों से सम्पन्न हैं। इनके अतिरिक्त और भी बहुत-सी देवियाँ हैं, जो अनेक प्रकार के आभूषणों की शोभा से युक्त तथा अनेकों प्रकार के रत्नों से सुशोभित हैं।

ये सम्पूर्ण देवियाँ क्रोध से भरी हुई हैं और भक्तों की रक्षा के लिए रथ पर बैठी दिखायी देती हैं। ये शङ्ख, चक्र, गदा, शक्ति, हल और मुसल, खेटक और तोमर, परशु तथा पाश, कुन्त और त्रिशूल एवं उत्तम शार्ङ्गधनुष आदि अस्त्र-शस्त्र अपने हाथों में धारण करती हैं।

दैत्यों के शरीर का नाश करना, भक्तों को अभय दान देना और देवताओं का कल्याण करना—यही उनके शस्त्रधारण का उद्देश्य है। महान रौद्ररूप, अत्यन्त घोर पराक्रम, महान बल और महान उत्साह वाली देवी तुम महान भय का नाश करने वाली हो, तुम्हें नमस्कार है।

तुम्हारी ओर देखना भी कठिन है। शत्रुओं का भय बढ़ाने वाली जगदम्बिके !

मेरी रक्षा करो। पूर्व दिशा में ऐन्द्री मेरी रक्षा करें। अग्निकोण में अग्निशक्ति, दक्षिण कोण में वाराही तथा नैऋत्यकोण में खड्गधारिणी मेरी रक्षा करें। पश्चिम दिशा में वारुणी और वायव्यकोण में मृग पर सवारी करने वाली देवी मेरी रक्षा करें। उत्तर दिशा में कौमारी और ईशान कोण में शूलधारिणी देवी रक्षा करें। हे ब्रह्माणी ! तुम ऊपर की ओर से मेरी रक्षा करो और वैष्णवी देवी नीचे की ओर से मेरी रक्षा करें, इसी प्रकार शव को अपना वाहन बनाने वाली चामुण्डा देवी दसों दिशाओं में मेरी रक्षा करें। जया आगे से और विजया पीछे की ओर से मेरी रक्षा करें। वामभाग में अजिता और दक्षिणभाग में अपराजिता मेरी रक्षा करें। उद्योतिनी शिखा की रक्षा करें। उमा मेरे मस्तक पर विराजमान होकर रक्षा करें।

ललाट में मालाधारी रक्षा करें और यशस्विनी देवी मेरी भौंहों की रक्षा करें। भौंहों के मध्य भाग में त्रिनेत्रा और नथुनों की यमघण्टा देवी रक्षा करें। कालिका देवी कपोलों की तथा भगवती शांकरी कानों के मूल भाग की रक्षा करें। नासिका में सुगन्धा और ऊपर के ओष्ठ में चर्चिका देवी रक्षा करें। नीचे

के ओष्ठ में अमृतकला तथा जिह्वा की सरस्वती देवी रक्षा करें। कौमारी दाँतों की, चण्डिका कण्ठप्रदेश की रक्षा करें। चित्रघण्टा गले की घाँटी की और महामाया तालु में रहकर रक्षा करें। कामाक्षी चिंबुक (ठोढ़ी) की और सर्वमङ्गला मेरी वाणी की रक्षा करें। भद्रकाली ग्रीवा की और धनुर्धरी मेरुदण्ड में रहकर रक्षा करें।

कण्ठ के बाहरी भाग में नीलग्रीवा और कण्ठ की नली में नलकूबरी रक्षा करें दोनों कंधों में खड्गिनी और मेरी दोनों भुजाओं की वज्रधारिणी रक्षा करें। दोनों हाथों की दण्डिनी और अंगुलियों की अम्बिका रक्षा करें। शूलेश्वरी नखों की रक्षा करें। कुलेश्वरी कुक्षि (पेट) में रहकर रक्षा करें।

महादेवी दोनों स्तनों की और शोकविनाशिनी देवी मन की रक्षा करें। ललिता देवी हृदय में और शूलधारिणी उदर में रहकर रक्षा करें। नाभि में कामिनी और गुह्यभाग की गुह्येश्वरी रक्षा करें। पूतना और कामिका लिङ्ग की और महिषवाहिनी गुदा की रक्षा करें।

भगवती कटिभाग की और विन्ध्यवासिनी घुटनों की रक्षा करें। सम्पूर्ण

कामनाओं को देने वाली महाबला देवी दोनों चरणों के पृष्ठ भाग की रक्षा करें। श्रीदेवी पैरों की अंगुलियों की और तलवासिनी देवी पैरों के तलुओं में रहकर रक्षा करें।

दंष्ट्राकराली देवी नखों की और ऊर्ध्वकेशिनी देवी केशों की रक्षा करें। रोमावलियों की छिद्रों में कौवेरी और त्वचा की वागीश्वरी देवी रक्षा करें। पार्वती देवी रक्त, मज्जा, वसा, मांस, हड्डी और मेदे की रक्षा करें। आँतों की कालरात्रि और पित्त की मुकुटेश्वरी रक्षा करें। मूलाधार आदि कमल-कोशों में पद्मावती देवी और कफ में चूड़ामणि देवी स्थित होकर रक्षा करें। नख के तेज की ज्वालामुखी रक्षा करें। जिसका किसी भी अस्त्र से भेदन नहीं हो सकता, वह अभेद्या देवी शरीर की समस्त संधियों में रहकर रक्षा करें। ब्रह्माणी ! आप मेरे वीर्य की रक्षा करें। छत्रेश्वरी छाया की तथा धर्मधारिणी देवी मेरे अहंकार मन और बुद्धि की रक्षा करें। वज्रहस्ता देवी मेरे प्राण, अपान, व्यान, उदान और समान वायु की रक्षा करें। भगवती कल्याणशोभना मेरे प्राण की रक्षा करें। रस, रूप, गन्ध, शब्द और स्पर्श—इन विषयों का अनुभव करते समय योगिनी

देवी रक्षा करें तथा सत्त्वगुण, रजोगुण और तमोगुण की रक्षा सदा नारायणी देवी करें।

वाराही आयु की रक्षा करें। वैष्णवी धर्म की रक्षा करें तथा चक्रिणी देवी यश, कीर्ति, लक्ष्मी, धन तथा विद्या की रक्षा करें। इन्द्राणी ! आप मेरे गोत्र की रक्षा करें। चण्डिके ! तुम मेरे पशुओं की रक्षा करो। महालक्ष्मी पुत्रों की रक्षा करें और भैरवी पत्नी की रक्षा करें। मेरे पथ की सुपथा तथा मार्ग की क्षेमकारी रक्षा करें। राजा के दरबार में महालक्ष्मी रक्षा करें तथा सब ओर व्याप्त रहने वाली विजया देवी सम्पूर्ण भय-तापों से मेरी रक्षा करें।

देवी ! जो स्थान इस कवच में नहीं कहा गया है अथवा रक्षा से रहित रह गया है, वह सब तुम्हारे द्वारा सुरक्षित हो; क्योंकि आप विजयशालिनी और पापनाशिनी हो।

कवच के द्वारा सब ओर से सुरक्षित मनुष्य जहाँ-जहाँ भी जाता है, वहाँ-वहाँ उसे धन लाभ होता है तथा सम्पूर्ण कामनाओं की सिद्धि करने वाली विजय की प्राप्ति होती है। वह जिस-जिस अभीष्ट वस्तु का चिन्तन करता है

वह उसको निश्चय ही प्राप्त कर लेता है। वह पुरुष इस पृथ्वी पर महान ऐश्वर्य का भागी होता है। कवच से सुरक्षित मनुष्य निर्भय हो जाता है, युद्ध में उसकी पराजय नहीं होती तथा वह तीनों लोकों में पूजनीय होता है। देवी का यह कवच देवताओं के लिए भी दुर्लभ है।

जो प्रतिदिन नियमपूर्वक तीनों संध्याओं के समय श्रद्धा के साथ इसका पाठ करता है, उसे दैवीकला प्राप्त होती है तथा वह तीनों लोकों में कहीं भी पराजित नहीं होता। इतना ही नहीं, वह अपमृत्यु से रहित हो १०० से भी अधिक वर्षों तक जीवित रहता है। उसकी मकरी, चेचक और कोढ़ आदि सम्पूर्ण व्याधियाँ नष्ट हो जाती हैं। कनेर, भाँग, अफीम, धतूरे आदि का स्थावर विष, साँप और बिच्छू आदि के काटने से चढ़ा हुआ जङ्गम विष तथा अहिफेन और तेल के संयोग आदि से बनने वाला कृत्रिम विष–ये सभी प्रकार के विष दूर हो जाते हैं, उस पर उनका कोई असर नहीं होता। इस पृथ्वी पर मारण मोहन आदि जितने आभिचारक (तान्त्रिक) प्रयोग होते हैं तथा इस प्रकार के जितने मन्त्र, यन्त्र होते हैं, वे सब इस कवच को हृदय में

धारण कर लेने पर उस मनुष्य को देखते ही नष्ट हो जाते हैं। ये ही नहीं, पृथ्वी पर विचरने वाले ग्रामदेवता, आकाशचारी देवविशेष, जल के सम्बन्ध से प्रकट होने वाले गण, उपदेश मात्र से सिद्ध होने वाले देवता, अपने जन्म के साथ प्रकट होने वाले देवता, कुलदेवता, माला (कण्ठमाला आदि), डाकिनी, शाकिनी, अन्तरिक्ष में विचरने वाली बलवती भयानक डाकिनियाँ, ग्रह, भूत, पिशाच, यक्ष, गन्धर्व, राक्षस, ब्रह्मराक्षस, बेताल, कूष्माण्ड और भैरव आदि अनिष्टकारक देवता भी; हृदय में कवच धारण किए रहने पर उस मनुष्य को देखते ही भाग जाते हैं। कवचधारी पुरुष को राजा से सम्मान-वृद्धि प्राप्त होती है। यह कवच मनुष्य के तेज की वृद्धि करने वाला और उत्तम है।

कवच का पाठ करने वाला पुरुष अपनी कीर्ति से विभूषित भूतल पर अपने सुयश के साथ-साथ वृद्धि को प्राप्त होता है। जो पहले कवच का पाठ करके उसके बाद सप्तशती चण्डी का पाठ करता है--उसकी जब तक वन, पर्वत और काननों सहित यह पृथ्वी टिकी रहती है, तब तक यहाँ पुत्र-पौत्र आदि

कुल की परम्परा बनी रहती है। फिर देह का अन्त होने पर वह पुरुष भगवती महामाया के प्रसाद से उस नित्य परमपद को प्राप्त करता है, जो देवताओं के लिए भी दुर्लभ है। वह सुन्दर दिव्य रूप धारण करता है और सदा शिव के साथ आनन्द का भागी होता है।

॥ इति देवी कवच भाषा॥

श्री अर्गला स्तोत्र

श्री मार्कण्डेयजी बोले–१. जयन्ती, २. मङ्गला, ३. काली, ४. भद्रकाली, ५. कपालिनी, ६. दुर्गा, ७. क्षमा, ८. शिवा, ९. धात्री, १०. स्वाहा और ११. स्वधा, इन नामों से प्रसिद्ध जगदम्बिके ! तुम्हें मेरा नमस्कार हो। देवी चामुण्डे ! तुम्हारी जय हो। सम्पूर्ण प्राणियों का कष्ट हरने वाली देवी ! तुम्हारी जय हो। सबमें व्याप्त रहने वाली देवी ! तुम्हारी जय हो। हे कालरात्रि ! तुम्हें नमस्कार है।

मधु और कैटभ वाली तथा ब्रह्माजी को वरदान देने वाली देवी ! तुम्हें

नमस्कार है। तुम मुझे रूप (आत्मस्वरूप का ज्ञान) दो, जय (मोह पर विजय) दो, यश (मोह-विजय तथा ज्ञान-प्राप्तिरूप यश) दो और मेरे काम, क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो।

महिषासुर का नाश करने वाली तथा भक्तों को सुख देने वाली देवी ! तुम्हें नमस्कार है। तुम रूप दो, जय दो, यश दो और काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो, रक्तबीज का वध और चण्ड-मुण्ड का विनाश करने वाली देवी ! तुम रूप दो, यश दो और काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। शुम्भ और निशुम्भ तथा धूम्रलोचन का मर्दन करने वाली देवी ! तुम रूप दो, जय दो, यश दो और काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। सबके द्वारा वन्दित युगल चरणों वाली तथा सम्पूर्ण सौभाग्य प्रदान करने वाली परमेश्वरी ! तुम रूप दो, जय दो, यश दो और काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। तुम्हारे रूप और चरित्र अचिन्त्य हैं। तुम समस्त शत्रुओं का नाश करने वाली हो। तुम रूप दो, जय दो, यश दो और काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। पापों को दूर करने वाली चण्डिके ! जो भक्तिपूर्वक तुम्हारे चरणों में सर्वदा मस्तक

झुकाते हैं, उन्हें तुम रूप दो, जय दो, यश दो और काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो।

रोगों का नाश करने वाली चण्डिके ! जो भक्तिपूर्वक तुम्हारी स्तुति करते हैं, उन्हें तुम रूप दो, जय दो, यश दो और उनके काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। चण्डिके ! इस संसार में जो भक्तिपूर्वक तुम्हारी पूजा करते हैं, उन्हें रूप दो, जय दो, यश दो और काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। मुझे सौभाग्य और आरोग्य दो, परम सुख दो, रूप दो, जय दो, यश दो और काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। जो मुझसे द्वेष रखते हों, उनका तुम नाश करो और मेरे बल की वृद्धि करो। रूप दो, जय दो, यश दो और काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। देवी ! मेरा कल्याण करो। मुझे उत्तम सम्पत्ति प्रदान करो। रूप दो, जय दो, यश दो और काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। अम्बिके ! देवता और असुर—दोनों ही अपने माथे के मुकुट की मणियों को तुम्हारे चरणों पर घिसते हैं। तुम रूप दो, जय दो, यश दो और काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। तुम अपने भक्तजनों को विद्वान,

यशस्वी और लक्ष्मीवान बनाओ और तथा रूप दो, जय दो, यश दो और काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो।

प्रचण्ड दैत्यों के दर्प का दलन करने वाली चण्डिके ! मुझ शरणागत को रूप दो, जय दो, यश दो और काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। चतुर्मुख ब्रह्माजी के द्वारा प्रशंसित हे चार भुजवाली परमेश्वरी ! रूप दो, जय दो, यश दो और काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। देवी अम्बिके ! भगवान् विष्णु नित्य-निरंतर भक्तिपूर्वक तुम्हारी स्तुति करते रहते हैं। तुम रूप दो, जय दो, यश दो और काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। हिमाचल की कन्या पार्वती के पति महादेवजी के द्वारा प्रशंसित होने वाली परमेश्वरी ! तुम रूप दो, जय दो, यश दो और काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। शचीपति इन्द्र के द्वारा सद्भाव से पूजित होने वाली परमेश्वरी ! तुम रूप दो, जय दो, यश दो और काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। प्रचण्ड भुजदण्डों वाले दैत्यों का घमण्ड चूर करने वाली देवी ! तुम रूप दो, जय दो, यश दो और काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। देवी अम्बिके ! तुम

अपने भक्तजनों को सदा असीम आनन्द प्रदान करती रहती हो। मुझे रूप दो, यश दो और काम-क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो। मन की इच्छा के अनुसार चलने वाली मनोहर पत्नी प्रदान करो, जो मनुष्य इस स्तोत्र का पाठ करके सप्तशती रूपी महास्तोत्र का पाठ करता है, वह सप्तशती की जप संख्या से मिलने वाले श्रेष्ठ फल को प्राप्त करता है। साथ ही वह प्रचुर सम्पत्ति भी प्राप्त कर लेता है।

॥ इति अर्गला स्तोत्र॥

श्री कीलक स्तोत्र

चण्डिका देवी को नमस्कार है। श्री मार्कण्डेयजी बोले–विशुद्ध ज्ञान ही जिनका शरीर है, तीनों वेद ही जिनके दिव्य नेत्र हैं, जो कल्याण प्राप्ति के हेतु हैं तथा अपने मस्तक पर अर्धचन्द्र का मुकुट धारण करते हैं, उन भगवान शिव को नमस्कार है। मन्त्रों का जो अभिकीलक है अर्थात् मन्त्रों की सिद्धि में विघ्न उपस्थित करने वाले शापरूपी कीलक का जो निवारण करने वाला

है, उस सप्तशती स्तोत्र को सम्पूर्ण रूप से जानना चाहिए। यद्यपि सप्तशती के अतिरिक्त अन्य मन्त्रों के जप में भी जो निरन्तर लगा रहता है, वह भी कल्याण का भागी होता है। उसके भी उच्चाटन आदि कर्म सिद्ध होते हैं तथा उसे भी समस्त दुर्लभ वस्तुओं की प्राप्ति हो जाती है, तथापि जो अन्य मन्त्रों का जप न करके केवल इस सप्तशती नामक स्तोत्र से ही देवी की स्तुति करते हैं, उन्हें स्तुति मात्र से ही देवी सिद्ध हो जाती है। उन्हें अपने कार्य की सिद्धि के लिए मन्त्र, औषधि तथा अन्य किसी साधन के उपयोग की आवश्यकता नहीं रहती। बिना जप के ही उसके उच्चाटन आदि समस्त आभिचारिक कर्म सिद्ध हो जाते हैं। इतना ही नहीं उनकी सम्पूर्ण अभीष्ट वस्तुएँ भी सिद्ध होती हैं। लोगों के मन में यह शंका थी कि 'जब केवल सप्तशती की उपासना से अथवा सप्तशती को छोड़कर अन्य मन्त्रों की उपासना से भी समान रूप से सब कार्य सिद्ध होते हैं, तब उनमें श्रेष्ठ कौन-सा साधन है ?' इस पर भगवान् शिव ने अपने पास आए हुए जिज्ञासुओं को बताया कि यह सप्तशती नामक सम्पूर्ण स्तोत्र ही सर्वश्रेष्ठ एवं शुभदायी

है। तब भगवती चण्डिका के सप्तशती नामक स्तोत्र को महादेवजी ने गुप्त कर दिया। सप्तशती के पाठ से जो पुण्य प्राप्त होता है, उसकी कभी समाप्ति नहीं होती, किंतु अन्य मन्त्रों के जपजन्य पुण्य की समाप्ति हो जाती है। अतः भगवान शिव ने अन्य मन्त्रों की अपेक्षा जो सप्तशती की ही श्रेष्ठता का निर्णय किया–अन्य मन्त्रों का जप करने वाला पुरुष भी यदि सप्तशती के स्तोत्र और जप का अनुष्ठान कर ले तो वह भी पूर्णरूप से ही कल्याण का भागी होता है, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है। जो साधक कृष्णपक्ष की चतुर्दशी अथवा अष्टमी को एकाग्रचित्त होकर भगवती की सेवा में अपना सर्वस्व समर्पित कर देता है और फिर उसे प्रसाद रूप में ग्रहण करता है, उसी पर भगवती प्रसन्न होती हैं, अन्यथा उनकी प्रसन्नता नहीं प्राप्त होती। इस पर सिद्धि के प्रतिबन्धक रूप कीलन के द्वारा महादेवी जी ने इस स्तोत्र को कीलित कर रखा है। जो ऊपर बताई गई विधि से निष्कीलन करके इस सप्तशती-स्तोत्र का प्रतिदिन स्पष्ट उच्चारणपूर्वक पाठ कता है, वह मनुष्य सिद्ध हो जाता है, वही देवी का पार्षद होता है और वही गन्धर्व भी होता है।

सर्वत्र विचरते रहते पर भी इस संसार में उसे कहीं भी भय नहीं होता। वह अकाल मृत्यु के वश में नहीं पड़ता तथा देह त्यागने के बाद मोक्ष को प्राप्त होता है। अतः कीलन को जानकर उसका परिहार करके ही सप्तशती का पाठ आरम्भ करना चाहिए। जो ऐसा नहीं करता, उसका नाश हो जाता है। इसलिए कीलन और निष्कीलन का ज्ञान प्राप्त करने पर ही यह स्तोत्र निर्दोष होता है और विद्वान पुरुष का इस निर्दोष स्तोत्र का ही पाठ आरम्भ करते हैं। स्त्रियों में जो कुछ भी सौभाग्य आदि दृष्टिगोचर होता है, वह सब देवी के प्रसाद का ही फल है। अतः इस कल्याणदायक स्तोत्र का सदा जप करना चाहिए। इस स्तोत्र का मन्द स्वर में पाठ करने पर कम फल की प्राप्ति होती है और उच्च स्वर से पाठ करने पर पूर्ण फल की प्राप्ति होती है। अतः उच्च स्वर से ही उसका पाठ आरम्भ करना चाहिए। जिनके प्रसाद से ऐश्वर्य, सौभाग्य, आरोग्य, सम्पत्ति, शत्रु का नाश तथा मोक्ष की भी प्राप्ति होती है, उन कल्याणदायी जगदम्बा की स्तुति मनुष्य क्यों नहीं करते !

॥ इति कीलक स्तोत्र॥

रात्रि सूक्त

महतत्त्वादिरूप में व्यापक इन्द्रियों से संसार की समस्त वस्तुओं को प्रकाशित करने वाले ये रात्रिरूपा देवी अपने उत्पन्न किए हुए जीवों के शुभाशुभ कर्मों को देखती हैं और उनके अनुरूप फल की व्यवस्था करने के लिए समस्त विभूतियों को धारण करती हैं। ये देवी अमर हैं और सम्पूर्ण विश्व को, नीचे फैलने वाली लता आदि को तथा ऊपर बढ़ने वाले वृक्षों को भी व्याप्त करके स्थित हैं, इतना ही नहीं, ये ज्ञानमय ज्योति से जीवों के अज्ञानान्धकार का नाश कर देती हैं। चित् शक्ति रूपी रात्रिदेवी आकर अपनी बहिन ब्रह्मविद्यामयी उषादेवी को प्रकट करती हैं, जिससे अविद्यामय अन्धकार स्वतः नष्ट हो जाता है। वे रात्रि देवी इस समय मुझ पर प्रसन्न हों, जिनके आने पर हमलोग अपने घरों में सुख से सोते हैं, ठीक वैसे ही–जैसे रात्रि के समय पक्षी वृक्षों पर बनाये हुए अपने घोंसलों में सुखपूर्वक शयन करते हैं। उस करुणामयी रात्रि देवी की गोद में सम्पूर्ण ग्रामवासी मनुष्य, पैरों से चलने वाले गाय, घोड़े आदि पशु,

पंखों से उड़ने वाले पक्षी एवं पतंगे आदि, किसी प्रयोजन से यात्रा करने वाले पथिक और बाज आदि भी सुखपूर्वक सोते हैं। हे रात्रिमयी चित्शक्ति ! तुम कृपा करके वासनामयी वृकी तथा पापमय वृक को हमसे अलग करो। काम आदि तस्करसमुदाय को भी दूर हटाओ। हमारे लिए सुखपर्वूक तारनहारी हो जाओ व मोक्षदायिनी एवं कल्याणकारिणी बन जाओ। हे उषा ! सब ओर फैल हुआ यह अज्ञानमय काला अन्धकार मेरे निकट आ पहुँचा है। तुम इसे ऋण की भांति दूर करो–जैसे धन देकर अपने भक्तों के ऋण दूर करती हो, उसी प्रकार ज्ञान देकर इस अज्ञान को भी दूर कर दो। हे रात्रि देवी ! तुम दूध देने वाली गऊ के समान हो। मैं तुम्हारे समीप आकर स्तुति आदि से तुम्हें अपने अनुकूल करता हूँ। परम व्योमस्वरूपा परमात्मा की पुत्री ! तुम्हारी कृपा से मैं काम आदि शत्रुओं को जीत चुका हूँ, तुम स्तोम की भाँति मेरे इस हविष्य को भी स्वीकार करो।

२

दूसरा दिन : ब्रह्मचारिणी

दधाना करपद्माभ्यामक्षमालाकमण्डलू।
देवी प्रसीदतु मयि ब्रह्मचारिण्यनुत्तमा॥

दुर्गा जी की नौ शक्तियों में से दूसरा स्वरूप ब्रह्मचारिणी का है। यहाँ 'ब्रह्मा' शब्द का अर्थ तपस्या से है। ब्रह्मचारिणी का अर्थ हुआ तप की चारिणी-तप का आचरण करने वाली। ब्रह्मचारिणी देवी का स्वरूप पूर्ण ज्योतिर्मय एवं अत्यन्त भव्य है। इनके बाएँ हाथ में कमण्डलु और दाएँ हाथ में जप की माला रहती है।

माँ दुर्गा का यह दूसरा स्वरूप भक्तों और सिद्धों को अनन्त फल प्रदान करने वाला है। इनकी उपासना से मनुष्य में तप, त्याग, वैराग्य, सदाचार, संयम की वृद्धि होती है। दुर्गा पूजा

के दूसरे दिन इन्हीं की उपासना की जाती है। इस दिन साधक का मन 'स्वाधिष्ठान' चक्र में स्थित होता है। इस चक्र में अवस्थित मनवाला योगी उनकी कृपा और भक्ति प्राप्त करता है।

पहला अध्याय

भगवती की महिमा तथा मधु कैटभ वध

भगवान् विष्णु के सो जाने पर मधु कैटभ को मारने के लिए कमलजन्मा ब्रह्माजी ने जिनका स्तवन किया था, उन महाकाली देवी का मैं स्तवन करता हूँ। वे अपने दस हाथों में खड्ग, चक्र, गदा, बाण, धनुष, परिघ, शूल, भुशुण्डि, मस्तक और शङ्ख धारण करती हैं। उनके तीन नेत्र हैं। वे समस्त अङ्गों में दिव्य आभूषणों से सुशोभित हैं। उनके शरीर की कान्ति नीलमणि के समान है तथा वे दस मुखों और दस पैरों से युक्त हैं।

श्री मार्कण्डेय जी बोले—सूर्य के पुत्र सावर्णि जो आठवें मनु कहे जाते हैं, अब उनकी उत्पत्ति की कथा विस्तारपूर्वक कहता हूँ, सुनो।

सूर्यकुमार महाभाग सावर्णि भगवती महामाया के अनुग्रह से जिस प्रकार मन्वन्तर के स्वामी हुए, वही प्रसङ्ग सुनाता हूँ।

पूर्वकाल की बात है, स्वारोचिष मन्वन्तर में राजा सुरथ थे, जो चैत्र वंश में उत्पन्न हुए थे। उनका समस्त भूमण्डल पर अधिकार था। वे प्रजा का अपने पुत्र, पौत्रों की भांति धर्मपूर्वक पालन करते थे; तो भी उस समय कोलाविध्वंसी नाम के क्षत्रिय उनके शत्रु हो गए। राजा सुरभ की दण्ड नीति बड़ी प्रबल थी। उनका शत्रुओं के साथ संग्राम हुआ। कोलाविध्वंसी संख्या में कम थे, तो भी राजा सुरथ युद्ध में उनसे परास्त हो गए। तब वे युद्धभूमि से अपने नगर को लौट आए और केवल अपने देश के राजा होकर रहने लगे। किंतु वहाँ भी उन प्रबल शत्रुओं ने उस समय महाभाग राजा सुरथ पर आक्रमण कर दिया। राजा का बल कम हो चुका था; इसलिये उनके दुष्ट, बलवान् एवं दुरात्मा मन्त्रियों ने वहाँ उनकी राजधानी में भी राजकीय सेना और खजाने को छीन लिया। राजा सुरथ का प्रभुत्व नष्ट हो चुका था, इसलिए वे शिकार खेलने के बहाने घोड़े पर सवार हो वहाँ से अकेले ही एक घने जंगल में चले गए। वहाँ उन्होंने

मेधा मुनि का आश्रम देखा, जहाँ बहुत से हिंसक जीव अपनी स्वाभाविक हिंसावृत्ति छोड़कर परम शांत-भाव से रहते थे। मुनि के बहुत से शिष्य उस वन की शोभा बढ़ा रहे थे। वहाँ जाने पर मुनि ने उनका सत्कार किया और वे उन मुनिश्रेष्ठ के आश्रम पर इधर-उधर विचरते हुए कुछ समय तक रहे। फिर ममता के वशीभूत होकर वहाँ इस प्रकार चिन्ता करने लगे–'पूर्वकाल में मेरे पूर्वजों ने जिसका पालन किया था, वही नगर आज मुझसे रहित है। पता नहीं, मेरे दुराचारी भृत्यगण उसकी धर्मपूर्वक रक्षा करते हैं या नहीं। जो सदा मद की वर्षा करने वाला और शूरवीर था, वह मेरा प्रधान हाथी अब शत्रुओं के अधीन होकर न जाने किन भोगों को भोगता होगा ? जो लोग मेरी कृपा, धन और भोजन पाने से सदा मेरे पीछे-पीछे चलते थे, वे निश्चय ही अब दूसरे राजाओं का अनुसरण करते होंगे। उन अपव्ययी लोगों के द्वारा सदा खर्च होते रहने के कारण अत्यन्त कष्ट से इकट्ठा किया हुआ मेरा वह खजाना खाली हो जाएगा।' इस प्रकार से तथा और भी कई बातें राजा सुरथ निरन्तर सोचते रहते थे। एक दिन उन्होंने वहाँ मेधा ऋषि के आश्रम के निकट एक वैश्य को देखा

और उससे पूछा–'भाई तुम कौन हो ? तुम्हारे यहाँ आने का क्या प्रयोजन है ? तुम क्यों शोकग्रस्त और खिन्न चित्त दिखायी देते हो ?' राजा सुरथ का यह प्रेमपूर्वक कहा हुआ वचन सुनकर वैश्य ने विनीत भाव से उन्हें प्रणाम करके कहा–

वैश्य बोला–राजन् ! मैं धनिकों के कुल में उत्पन्न समाधि नामक वैश्य हूँ। मेरे दुष्ट स्त्री-पुत्रों ने धन के लोभ से मुझे घर से बाहर निकाल दिया है। मैं इस समय धन, स्त्री और पुत्रों से विहीन हूँ। मेरे विश्वसनीय बन्धुओं ने मेरा ही धन लेकर मुझे दूर कर दिया है, इसलिये दुःखी होकर मैं वन में चला आया हूँ। यहाँ रहकर मैं इस बात को नहीं जानता कि मेरे पुत्रों की, स्त्री की, स्वजनों की, कुशल है या नहीं। इस समय घर में वे कुशल से रहते हैं अथवा उन्हें कोई कष्ट है ? वे मेरे पुत्र कैसे हैं ? क्या वे सदाचारी हैं अथवा दुराचारी हो गए हैं ? राजा ने पूछा–जिन लोभी स्त्री-पुत्र आदि ने धन के कारण तुम्हें घर से निकाल दिया, उनके प्रति तुम्हारे चित्त में इतना स्नेह क्यों है ?

वैश्य बोला—आप मेरे विषय में जो कहते हैं, वह सब ठीक है। किंतु क्या करूँ, मेरा मन निष्ठुरता धारण नहीं करता। जिन्होंने धन के लोभ में पड़कर पिता के प्रति स्नेह, पति के प्रति प्रेम तथा आत्मीयजनों के प्रति अनुराग को तिलांजलि दे मुझे घर से निकाल दिया है, उन्हीं के प्रति मेरे हृदय में इतना स्नेह है। महामते ! गुणहीन बन्धुओं के प्रति भी जो मेरा चित्त इस प्रकार प्रेम-मग्न हो रहा है, यह क्या है—इस बात को मैं जानकर भी नहीं जान पाता। उनके लिए मैं दीर्घश्वास ले रहा हूँ और मेरा हृदय अत्यन्त दुःखित हो रहा है। उन लोगों में मेरे प्रति प्रेम का सर्वथा अभाव है; तो भी उनके लिए मेरा मन निष्ठुर नहीं हो पाता, इसके लिए क्या करूँ ?

श्री मार्कण्डेयजी बोले—ब्रह्मन् ! तदनन्तर राजाओं में श्रेष्ठ सुरथ और वह समाधि नामक वैश्य दोनों साथ-साथ मेधा मुनि की सेवा में उपस्थित हुए और उनके साथ यथा-योग्य न्यायानुकूल विनयपूर्वक व्यवहार करके बैठ गए। तत्पश्चात् वैश्य और राजा ने वार्तालाप आरम्भ किया।

राजा ने कहा—भगवन् ! मैं आपसे एक बात पूछना चाहता हूँ, उसे बताइये।

मेरा चित्त अपने अधीन न होने के कारण यह बात मेरे मन को बहुत दुःख देती है। जो राज्य मेरे हाथ से चला गया है, उसमें और उसके सम्पूर्ण अंगों में मेरी ममता बनी हुई है। हे मुनिश्रेष्ठ ! यह जानते हुए भी कि वह अब मेरा नहीं है, अज्ञानी की भांति मुझे उसके लिए दुःख होता है, यह क्या है ? इधर यह वैश्य भी घर से अपमानित होकर आया है। इसके पुत्र, स्त्री और नौकरों ने इसे छोड़ दिया है। स्वजनों ने भी इसका त्याग कर दिया है, तो भी यह उनके प्रति अत्यन्त स्नेह रखता है। इस प्रकार यह तथा मैं दोनों बहुत दुःखी हैं। जिसमें प्रत्यक्ष दोष देखा गया है, उस विषय के लिए भी हमारे मन में ममताजनित आकर्षण पैदा हो रहा है। महाभाग ! हम दोनों समझदार हैं, तो भी हममें जो मोह पैदा हुआ है, यह क्या है ? विवेक शून्य पुरुष की भांति मुझमें और इसमें भी यह मूढ़ता प्रत्यक्ष दिखायी देती है।

ऋषि बोले—महाभाग ! विषय मार्ग का ज्ञान सब जीवों को है, इसी प्रकार विषय भी सबके लिए अलग-अलग हैं, कुछ प्राणी दिन में नहीं देखते और दूसरे रात में नहीं देखते तथा कुछ ऐसे हैं जो दिन और रात्रि में भी समान रूप

से ही देखते हैं। यह ठीक है कि मनुष्य समझदार होते हैं, किन्तु केवल वे ही ऐसे नहीं होते। पशु, पक्षी और मृग आदि सभी प्राणी समझदार होते हैं। मनुष्यों की समझ भी वैसी ही होती है, जैसी उन मृग और पक्षियों की होती है। जैसी मनुष्य की समझ होती है, वैसी ही उन मृग पक्षी आदि की होती है। यह तथा अन्य बातें भी प्रायः दोनों में समान ही हैं। समझ होने पर ही इन पक्षियों को तो देखो, ये स्वयं भूख से पीड़ित होते हुए भी मोहवश बच्चों की चोंच में कितने चाव से अन्न के दाने डाल रहे हैं। नरश्रेष्ठ ! क्या तुम नहीं देखते कि यह मनुष्य समझदार होते हुए भी लोभवशं अपने किए हुए उपकार का बदला पाने के लिए पुत्रों की अभिलाषा करते हैं। यद्यपि उन सबमें समझ की कमी नहीं है, तथापि वे संसार की स्थिति अर्थात् जन्म-मरण की परम्परा बनाये रखने वाले भगवती महामाया के प्रभाव द्वारा ममतामय भँवर से युक्त मोह के गहन गर्त में गिराये गए हैं। अतः इसमें आश्चर्य नहीं करना चाहिए। जगदीश्वर भगवान् विष्णु की योगनिद्रारूपा जो भगवती महामाया हैं, उन्हीं से यह जगत मोहित हो रहा है। वे भगवती महामाया देवी, ज्ञानियों के भी चित्त को बलात्

खींचकर मोह में डाल देती हैं। वे इस सम्पूर्ण चराचर जगत की सृष्टि करती हैं तथा वे ही प्रसन्न होने पर मनुष्यों को मुक्ति के लिए वरदान देती हैं। वे ही पराविद्या, संसार-बन्धन और मोक्ष की हेतु सनातनी देवी तथा सम्पूर्ण ईश्वरों की भी अधीश्वरी हैं।

राजा ने पूछा—भगवन् ! जिन्हें आप महामाया कहते हैं, वे देवी कौन हैं ? ब्रह्मन् ! उनका आविर्भाव कैसे हुआ ? तथा उनके चरित्र कौन-कौन से हैं ? ब्रह्मवेत्ताओं में श्रेष्ठ महर्षि ! उन देवी का जैसा प्रभाव हो, जैसा स्वरूप हो, और जिस प्रकार उनका प्रादुर्भाव हुआ हो, वह सब मैं आपके मुख से सुनना चाहता हूँ।

ऋषि बोले—राजन् ! वास्तव में तो वे देवी नित्यस्वरूपा ही हैं। सम्पूर्ण जगत् उन्हीं का रूप है तथा उन्होंने समस्त विश्व को व्याप्त कर रखा है, तथापि उनका प्राकट्य अनेक प्रकार से होता है। वह मुझसे सुनो। वे नित्य और अजन्मा हैं, तब भी जब देवताओं का कार्य सिद्ध करने के लिए प्रकट होती हैं, उस समय लोक में उत्पन्न हुई कहलाती हैं।

कल्प के अन्त में जब सम्पूर्ण जगत् एकार्णव में लीन हो रहा था और भगवान् विष्णु शेषनाग की शय्या बिछाकर योगनिद्रा का आश्रय ले सो रहे थे, उस समय उनके कानों के मैल से दो भयंकर असुर उत्पन्न हुए, जो मधु और कैटभ के नाम से विख्यात थे। वे दोनों ब्रह्माजी का वध करने को तत्पर हो गए। भगवान् विष्णु के नाभि कमल में विराजमान प्रजापति ब्रह्माजी ने जब उन दोनों भयानक असुरों को अपने समीप आया हुआ और भगवान् को निद्रामग्न देखा, तब एकाग्रचित्त होकर उन्होंने भगवान् विष्णु को जगाने के लिए उनके नेत्रों में निवास करने वाली योगनिद्रा का स्तवन आरम्भ किया। जो इस विश्व की अधीश्वरी, जगत् को धारण करने वाली, संसार का पालन और संहार करने वाली तथा तेजस्वरूप भगवान् विष्णु की अनुपम शक्ति हैं, उन्हीं भगवती निद्रा देवी की भगवान् ब्रह्मा स्तुति करने लगे।

ब्रह्माजी बोले–देवी ! तुम्हीं स्वाहा, तुम्हीं स्वधा और तुम्हीं वषट्कार हो। स्वर भी तुम्हारे ही स्वरूप हैं। तुम्हीं जीवनदायिनी सुधा हो। नित्यअक्षर प्रणव में अकार, उकार, मकार–इन तीनों मात्राओं के रूप में तुम्हीं स्थित हो तथा इन

तीनों मात्राओं के अतिरिक्त जो बिन्दुरूप नित्य अर्धमात्रा है, जिसका विशेष रूप से उच्चारण नहीं किया जा सकता, वह भी तुम्हीं हो।

देवी ! तुम्हीं संध्या, सावित्री तथा परमजननी हो। देवी ! तुम्हीं इस अखिल ब्रह्माण्ड को धारण करती हो। तुमसे ही इस जगत की सृष्टि होती है। तुम्हीं से इसका पालन होता है और सदा तुम्हीं कल्प के अन्त में सबको अपना ग्रास बना लेती हो।

जगन्मयी देवी ! इस जगत् की उत्पत्ति के समय तुम सृष्टिरूपा हो, पालन करने में स्थितरूपा हो तथा कल्पान्त के समय संहाररूप धारण करने वाली हो। तुम्हीं महाविद्या, महामाया, महामेधा, महास्मृति, महामोहरूपा, महादेवी और महासुरा हो, तुम्हीं तीनों गुणों को उत्पन्न करने वाली प्रकृति हो। भयंकर कालरात्रि, महारात्रि और मोहरात्रि भी तुम्हीं हो। तुम्हीं श्री, तुम्हीं ईश्वरी, तुम्हीं ह्रीं और तुम्हीं बोधस्वरूपा बुद्धि हो। लज्जा, पुष्टि, तुष्टि, शान्ति और क्षमा भी तुम्हीं हो। तुम खड्गधारिणी, शूलधारिणी, घोररूपा तथा गदा, चक्र, शङ्ख और धनुष धारण करने वाली हो। बाण, भुशुण्डि और परिघ—ये भी तुम्हारे

अस्त्र हैं। तुम सौम्य और सौम्यतर हो–इतना ही नहीं, जितने भी सौम्य एवं सुंदर पदार्थ हैं, उन सबकी अपेक्षा तुम अधिक सुन्दरी हो। पर और अपर–सबसे परे रहने वाली परमेश्वरी तुम्हीं हो। सर्वस्वरूप देवी ! कहीं भी सत्-असत्रूप जो कुछ वस्तुएँ हैं और उन सबकी जो शक्ति है, वह तुम्हीं हो। ऐसी अवस्था में तुम्हारी स्तुति क्या हो सकती है ? जो इस जगत् की सृष्टि, पालन और संहार करते हैं, उन भगवान् को भी जब तुमने निद्रा के अधीन कर दिया है, तब तुम्हारी स्तुति करने में यहाँ कौन समर्थ हो सकता है ? मुझको, भगवान् शंकर को तथा भगवान् विष्णु को भी तुमने ही शरीर धारण कराया है। अतः तुम्हारी स्तुति करने की शक्ति किसमें है ? देवी ! तुम तो अपने इन कृपालु प्रभावों से ही प्रशंसा के योग्य हो। ये जो दोनों दुर्धर्ष असुर मधु और कैटभ हैं, उनको मोह में डाल दो और जगदीश्वर भगवान् विष्णु को शीघ्र जगा दो। साथ ही इनके भीतर इन दोनों महान असुरों को मार डालने की बुद्धि उत्पन्न कर दो।

श्री मार्कण्डेय जी बोले–राजन् ! जब ब्रह्माजी ने वहाँ मधु और कैटभ को

मारने के उद्देश्य से भगवान् विष्णु को जगाने के लिए तमोगुण की अधिष्ठात्री देवी योगनिद्रा की इस प्रकार स्तुति की, तब वे भगवान् के नेत्र, मुख, नासिका, बाहु, हृदय और वक्षस्थल से निकलकर अव्यक्तजन्मा ब्रह्माजी की दृष्टि के समक्ष खड़ी हो गईं। योगनिद्रा से मुक्त होने पर जगत के स्वामी भगवान् जनार्दन उस एकार्णव जल में शेषनाग की शय्या से जाग उठे।

फिर उन्होंने उन दोनों असुरों को देखा। वे दुरात्मा मधु और कैटभ अत्यन्त बलवान् और पराक्रमी थे और क्रोध से लाल आँखें किए विष्णुजी को खा जाने के लिए उद्योग कर रहे थे। तब भगवान् श्रीहरि ने उठकर उन दोनों के साथ पाँच हजार वर्षों तक केवल बाहु युद्ध किया। वे दोनों भी अत्यन्त बल के कारण उन्मत्त हो रहे थे। इधर महामाया ने भी उन्हें मोह में डाल रखा था; इसलिए वे भगवान् विष्णु से कहने लगे–'हम तुम्हारी वीरता से संतुष्ट हैं। तुम हमसे कोई वर माँगो।'

श्री भगवान् बोले–यदि तुम दोनों मुझ पर प्रसन्न हो तो अब मेरे हाथ से मारे जाओ। बस, इतना-सा ही मैंने वर माँगा है। यहाँ अन्य किसी वर से क्या

लेना है। इस प्रकार छले जाने पर जब उन्होंने सम्पूर्ण जगत् में जल ही जल देखा, तब कमलनयन भगवान् से कहा–'जहाँ पृथ्वी जल में डूबी हुई न हो–जहाँ सूखा स्थान हो, वहीं हमारा वध करो।'

श्री मार्कण्डेय जी बोले–तब 'तथास्तु' कहकर शङ्ख, चक्र और गदा धारण करने वाले भगवान् ने उन दोनों के मस्तक अपनी जाँघ पर रखकर चक्र से काट डाले। इस प्रकार ये देवी महामाया ब्रह्माजी की स्तुति करने पर स्वयं प्रकट हुई थीं। अब तुमसे उनके प्रभाव का पुनः वर्णन करता हूँ, सुनो।

दूसरा अध्याय

देवीजी का प्रादुर्भाव व महिषासुर की सेना का वध

श्री मार्कण्डेय जी बोले–पूर्वकाल में देवताओं और असुरों में पूरे सौ वर्षों तक घोर संग्राम हुआ था। उसमें असुरों का स्वामी महिषासुर था और देवताओं के नायक इन्द्र थे। उस युद्ध में देवताओं की सेना महाबली असुरों से परास्त

हो गई। सम्पूर्ण देवताओं को जीतकर महिषासुर इन्द्र बन बैठा। तब पराजित देवता प्रजापति ब्रह्माजी को आगे करके उस स्थान पर गए, जहाँ भगवान् शंकर और विष्णु विराजमान थे। देवताओं ने महिषासुर के पराक्रम तथा अपनी पराजय का यथावत् वृत्तान्त उन दोनों देवेश्वरों से विस्तारपूर्वक कह सुनाया।

वे बोले–'भगवन् ! महिषासुर, सूर्य, इन्द्र, अग्नि, वायु, चन्द्रमा, यम, वरुण तथा अन्य देवताओं के भी अधिकार छीनकर स्वयं ही सबका अधिष्ठाता बन बैठा है। उस दुरात्मा महिष ने समस्त देवताओं को स्वर्ग से निकाल दिया है। अब वे मनुष्यों की भाँति पृथ्वी पर विचरते हैं। दैत्यों की यह सारी बातें हमने आप लोगों से कह सुनाई। अब हम आपकी ही शरण में आए हैं। उसके वध का कोई उपाय सोचिये।'

इस प्रकार देवताओं के वचन सुनकर भगवान् विष्णु और शिव जी ने दैत्यों पर बड़ा क्रोध किया। उनकी भौंहें तन गईं और मुख टेढ़ा हो गया। तब अत्यन्त कोप से भरे हुए चक्रपाणि श्री विष्णु के मुख से एक महान तेज प्रकट हुआ। इसी प्रकार ब्रह्मा जी, शंकर जी तथा इन्द्र आदि अन्य देवताओं के शरीर से

भी बड़ा भारी तेज निकला। वह मिलकर एक हो गया। महान तेज का यह पुञ्ज जलते हुए पर्वत-सा जान पड़ा। देवताओं ने देखा, वहाँ उसकी ज्वालाएँ सम्पूर्ण दिशाओं में व्याप्त हो रही थीं। सम्पूर्ण देवताओं के शरीर से प्रकट हुए उस तेज की कहीं तुलना नहीं थी। एकत्रित होने पर वह एक नारी के रूप में परिणत हो गया और वह अपने प्रकाश से तीनों लोकों में व्याप्त जान पड़ा।

भगवान् शंकर का जो तेज था, उससे उन देवी का मुख प्रकट हुआ। यमराज के तेज से उनके सिर में बाल उत्पन्न हुए। श्री विष्णु भगवान के तेज से उनकी भुजाएँ उत्पन्न हुईं। चन्द्रमा के तेज से दोनों स्तनों का और इन्द्र के तेज से कटिप्रदेश का प्रादुर्भाव हुआ। वरुण के तेज से जङ्घा और पिंडली तथा पृथ्वी के तेज से नितम्ब भाग प्रकट हुआ। ब्रह्मा के तेज से दोनों चरण और सूर्य के तेज से उनकी अँगुलियाँ उत्पन्न हुईं। वसुओं के तेज से हाथों की अँगुलियाँ और कुबेर के तेज से नासिका प्रकट हुई। उन देवी के दाँत प्रजापति के तेज से और तीनों नेत्र अग्नि के तेज से प्रकट हुए थे उनकी भौंहें संध्या के और कान वायु के तेज से उत्पन्न हुए थे। इसी प्रकार अन्यान्य देवताओं के तेज

से भी उन कल्याणमयी देवी का आविर्भाव हुआ। तदन्तर समस्त देवताओं के तेजपुञ्ज से प्रकट हुई देवी को देखकर महिषासुर के सताये हुए देवता बहुत प्रसन्न हुए। पिनाकधारी भगवान् शंकर ने अपने शूल से एक शूल निकालकर उन्हें दिया, फिर भगवान् विष्णु ने भी अपने चक्र से उत्पन्न करके भगवती को अर्पण किया। वरुण ने भी शङ्ख भेंट किया, अग्नि ने उन्हें शक्ति दी और वायु ने धनुष तथा बाण से भरे हुए दो तरकश प्रदान किये। सहस्त्र नेत्रों वाले देवराज इन्द्र ने अपने वज्र से वज्र उत्पन्न करके दिया और ऐरावत हाथी से उतारकर एक घण्टा भी प्रदान किया। यमराज ने कालदण्ड से दण्ड, वरुण ने पाश, प्रजापति ने स्फटिक की माला तथा ब्रह्माजी ने कमण्डलु भेंट किया।

सूर्य ने देवी के समस्त रोमकूपों में अपनी किरणों का तेज भर दिया। काल ने उन्हें चमकती हुई ढाल और तलवार दी। क्षीर सागर ने उज्ज्वल हार तथा कभी जीर्ण न होने वाले दो दिव्य वस्त्र भेंट किए। साथ ही उन्होंने दिव्य चूड़ामणि, दो कुण्डल, कड़े, उज्ज्वल अर्धचंद्र, सब बाहुओं के लिए केयूर, दोनों चरणो के लिए निर्मल नूपुर, गले की सुन्दर हँसली और सब अँगुलियों

में पहनने के लिए रत्नों की बनी अँगूठियाँ भी दीं। विश्वकर्मा ने उन्हें अत्यन्त निर्मल फरसा भेंट किया। साथ ही अनेक प्रकार के अस्त्र और अभेद्य कवच दिए, इनके सिवाय मस्तक और वक्षस्थल पर धारण करने के लिए कभी न मुरझाने वाले कमलों की मालाएँ दीं। जलधि ने उन्हें सुन्दर कमल का फूल भेंट किया। हिमालय ने सवारी के लिए सिंह तथा भाँति-भाँति के रत्न समर्पित किये। धनाध्यक्ष कुबेर ने मधु से भरा पान-पात्र दिया तथा सम्पूर्ण नागों के राजा शेष ने, जो इस पृथ्वी को धारण करते हैं, उन्हें बहुमूल्य मणियों से विभूषित नागहार भेंट किया।

इसी प्रकार अन्य देवताओं ने भी आभूषण और अस्त्र-शस्त्र देकर उन देवी का सम्मान किया। तत्पश्चात् उन्होंने बारम्बार अट्टहासपूर्वक उच्च स्वर से गर्जना की। उनके भयंकर नाद से सम्पूर्ण आकाश गूँज उठा। देवी का वह अत्यन्त उच्च स्वर से किया हुआ नाद कहीं समा न सका, आकाश उसके सामने छोटा प्रतीत होने लगा। उससे बड़ी भयानक प्रतिध्वनि हुई, जिससे सम्पूर्ण विश्व में हलचल मच गई और समुद्र काँप उठा। पृथ्वी डोलने लगी और

समस्त पर्वत हिलने लगे। उस समय देवताओं ने अत्यन्त प्रसन्नता के साथ सिंहवाहिनी भवानी से कहा–'देवी ! तुम्हारी जय हो'। साथ ही महर्षियों ने भक्ति-भाव से विनम्र होकर उनकी स्तुति की। सम्पूर्ण त्रिलोकी को क्षोभग्रस्त देख दैत्यगण अपनी समस्त सेना को कवच आदि से सुसज्जित कर, हाथों में हथियार लेकर सहसा उठकर खड़े हो गए।

उस समय महिषासुर ने बड़े क्रोध में आकर कहा–'ओह ! यह क्या हो रहा है ?' फिर वह सम्पूर्ण असुरों से घिरकर उस सिंहनाद की ओर लक्ष्य करके दौड़ा और आगे पहुँचकर उसने देवी को देखा, जो अपने प्रभाव से तीनों लोकों को प्रकाशित कर रही थीं। उनके चरणों के भार से पृथ्वी दबी जा रही थी। माथे के मुकुट से आकाश में रेखा-सी खिंच रही थी तथा वे अपने धनुष की टङ्कार से सातों पातालों को क्षुब्ध कर देती थीं। देवी अपनी हजारों भुजाओं से सम्पूर्ण दिशाओं को आच्छादित करके खड़ी थीं। तदनन्तर उनके साथ दैत्यों का युद्ध छिड़ गया। नाना प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों के प्रहार से सम्पूर्ण दिशाएँ चमकने लगीं। चिक्षुर नामक महान असुर जो महिषासुर का सेनानायक था,

वह देवी के साथ युद्ध करने लगा। अन्य दैत्यों की चतुरङ्गिनी सेना साथ लेकर चामर भी लड़ने लगा। साठ हजार रथियों के साथ आकर उदग्र नामक महादैत्य ने लोहा लिया।

एक करोड़ रथियों को साथ लेकर महाहनु नामक दैत्य युद्ध करने लगा। जिसके रोएँ तलवार के समान तीखे थे, वह असिलोमा नाम का महादैत्य पाँच करोड़ रथी सैनिकों सहित युद्ध में आ डटा। साठ लाख रथियों से घिरा हुआ वाष्कल नामक दैत्य भी उस युद्ध भूमि में लड़ने लगा। परिवारित नामक राक्षस हाथीसवार और घुड़सवारों के अनेक दलों तथा एक करोड़ रथियों की सेना लेकर युद्ध करने लगा। बिडाल नामक दैत्य पाँच अरब रथियों से घिरकर लोहा लेने लगा। इनके अतिरिक्त और भी हजारों महादैत्य रथ, हाथी और घोड़ों की सेना को साथ लेकर वहाँ देवी के साथ युद्ध करने लगे। स्वयं महिषासुर उस रणभूमि में कोटि-कोटि सहस्त्र रथ, हाथी और घोड़ों की सेना से घिरा खड़ा था।

वे दैत्य देवी के साथ तोमर, भिन्दिपाल, शक्ति, मूसल, खड्ग, परशु और पट्टिश आदि अस्त्र-शस्त्रों का प्रहार करते हुए युद्ध कर रहे थे। कुछ दैत्यों ने

उन पर शक्ति का प्रहार किया, कुछ लोगों ने पाश फेंके तथा कुछ दूसरे दैत्यों ने खड्ग प्रहार करके देवी को मार डालने का प्रयत्न किया। देवी ने भी क्रोध में भरकर खेल-खेल में ही अपने अस्त्र-शस्त्रों की वर्षा करके दैत्यों के वे समस्त अस्त्र-शस्त्र काट डाले। उनके मुख पर परिश्रम या थकावट का लेश भी चिह्न नहीं था, देवता और ऋषि उनकी स्तुति करते थे और वे भगवती परमेश्वरी दैत्यों के शरीरों पर अस्त्र-शस्त्रों की वर्षा करती रहीं। देवी का वाहन सिंह भी क्रोध में भरकर अपनी गर्दन के बालों को हिलाता हुआ असुरों की सेना में इस प्रकार विचरने लगा, मानो वनों में दावानल फैल रहा हो। रणभूमि में दैत्यों के साथ युद्ध करती अम्बिका देवी ने जितने निःश्वास छोड़े, वे सभी तत्काल सैकड़ों-हजारों गणों के रूप में प्रकट हो गए और परशु, भिन्दिपाल, खड्ग तथा पट्टिश आदि अस्त्रों द्वारा असुरों का सामना करने लगे। देवी की शक्ति से बढ़ते हुए वे गण असुरों का नाश करते हुए नगाड़ा और शङ्ख आदि बाजे बजाने लगे।

इस संग्राम-महोत्सव में कितने ही गण मृदङ्ग बजा रहे थे। तदन्तर देवी ने

इस संग्राम-महोत्सव में कितने ही गण मृदङ्ग बजा रहे थे। तदन्तर देवी ने

त्रिशूल से, गदा से, शक्ति की वर्षा से और खड्ग आदि से सैकड़ों महादैत्यों का संहार कर डाला। कितनों को घण्टे के भयंकर नाद से मूर्च्छित करके मार गिराया। बहुत से दैत्यों को पाश से बाँधकर धरती पर घसीटा। कितने ही दैत्य उनकी तीखी तलवार की मार से दो-दो टुकड़े हो गए। कितने ही मूसल की मार से अत्यन्त आहत होकर रक्तवमन करने लगे। कुछ दैत्य शूल से छाती फट जाने के कारण पृथ्वी पर ढेर हो गए। उस रणाङ्गण में बाण समूहों की वृष्टि से कितने ही असुरों की कमर टूट गई। बाज की तरह झपटने वाले देवीपीड़क दैत्यगण अपने प्राणों से हाथ धोने लगे। कइयों की बाँहें छिन्न-भिन्न हो गईं। कितनों की गर्दनें कट गईं। कितने ही दैत्यों के मस्तक कट-कटकर गिरने लगे। कुछ दैत्यों के शरीर मध्य भाग से ही विदीर्ण हो गए। कितने ही महादैत्य जाँघें कट जाने से पृथ्वी पर गिर पड़े। कितनों को ही देवी ने बाँह, एक पैर और एक नेत्र वाले करके दो टुकड़ों में चीर डाला। कितने ही दैत्य मस्तक कट जाने पर भी गिरकर फिर उठ जाते और केवल धड़ के ही रूप में हथियार हाथ में ले देवी के साथ युद्ध करने लगते थे। दूसरे कबन्ध युद्ध के बाजों की लय पर

नाचतें थे। कितने ही बिना सिर व धड़ के हाथों में खड्ग, शक्ति और ऋष्टि लिए दौड़ते थे तथा दूसरे-दूसरे राक्षस 'ठहरो-ठहरो...!!' यह कहते हुए देवी को युद्ध के लिए ललकारते थे। जहाँ वह घोर संग्राम हुआ था, वहाँ देवी द्वारा गिराये हुए रथ, हाथी, घोड़े और असुरों की लाशों से धरती ऐसी पट गई थी कि वहाँ चलना असम्भव हो गया था।

दैत्यों की सेना में हाथी, घोड़े और असुरों के शरीरों से इतनी अधिक मात्रा में रक्तपात हुआ था कि थोड़ी ही देर में वहाँ खून की बड़ी-बड़ी नदियाँ बहने लगीं। जगदम्बा ने दैत्यों की विशाल सेना को क्षणभर में नष्ट कर दिया--ठीक उसी तरह जैसे तृण और कठ के भारी ढेर को आग कुछ ही क्षणों में भस्म कर देती है।

देवी का सिंह भी गर्दन के बालों को हिला-हिलाकर जोर-जोर से गर्जना करता हुआ असुरों के शरीरों से मानों प्राण खींच लेता था। वहाँ देवी के गणों ने भी उन महादैत्यों के साथ ऐसा युद्ध किया, जिससे आकाश में खड़े हुए देवतागण उन पर प्रसन्न हुए और फूलों की वर्षा करने लगे।

३

तीसरा दिन : चन्द्रघण्टा

पिण्डज प्रवरारूढ़ा चण्डकोपास्त्रकैर्युता।
प्रसादं तनुते मह्यं चन्द्रघण्टेति विश्रुता।।

माँ दुर्गा की तीसरी शक्ति का नाम 'चन्द्रघण्टा' है। नवरात्र उपासना में तीसरे दिन इन्हीं के विग्रह का पूजन, आराधना की जाती है। इनका स्वरूप परम शांतिदायक और कल्याणकारी है। इनके मस्तक में घण्टे के आकार का अर्धचन्द्र है। इसी कारण इन देवी का नाम चन्द्रघण्टा पड़ा। इनके शरीर का रंग स्वर्ण के समान चमकीला है। इनका वाहन सिंह है।

हमें चाहिए कि हम मन, वचन कर्म एवं शरीर से शुद्ध होकर विधि-विधान के अनुसार माँ चन्द्रघण्टा की शरण लेकर उनकी उपासना, आराधना में तत्पर हों। इनकी उपासना से हम समस्त सांसारिक कष्टों से छूटकर सहज ही परमपद के अधिकारी बन सकते हैं।

तीसरा अध्याय

महिषासुर का वध

श्री मार्कण्डये जी बोले–दैत्यों की सेना को इस प्रकार तहस-नहस होते देख महादैत्य सेनापति चिक्षुर क्रोध में भरकर अम्बिका देवी से युद्ध करने के लिए आगे बढ़ा। वह असुर रणभूमि में देवी के ऊपर इस प्रकार बाणों की वर्षा करने लगा, जैसे बादल मेरुगिरि के शिखर पर पानी की धारा बरसा रहा हो।

,तब देवी ने अपने बाणों से उसके बाण समूह को अनायास ही काटकर उसके घोड़ों और सारथी को भी मार डाला। साथ ही उसके धनुष तथा अत्यन्त ऊँची ध्वजा को भी तत्काल काट गिराया। धनुष कट जाने पर उसके अंगों को अपने बाणों से बींध डाला। धनुष, रथ, घोड़े और सारथी के नष्ट हो जाने पर वह असुर ढाल और तलवार लेकर देवी की ओर दौड़ा। उसने तीखी धार

वाली तलवार से सिंह के मस्तक पर चोट करके देवी की भी बायीं भुजा में बड़े वेग से प्रहार किया।

राजन ! देवी की भुजा पर पहुँचते ही वह तलवार टूट गई, फिर तो क्रोध से लाल आँखें करके उस राक्षस ने शूल हाथों में लिया और उसे उस महादैत्य ने भगवती भद्रकाली के ऊपर चलाया। वह शूल आकाश से गिरते हुए सूर्य मण्डल की भाँति अपने तेज से प्रज्ज्वलित हो उठा। उस शूल को अपनी ओर आते देख देवी ने भी शूल से प्रहार किया। उससे राक्षस के शूल के सैकड़ों टुकड़े हो गए, साथ ही महादैत्य चिक्षुर की भी धज्जियाँ उड़ गईं। वह प्राणों से हाथ धो बैठा।

महिषासुर के सेनापति उस महापराक्रमी चिक्षुर के मारे जाने पर देवताओं को पीड़ा देने वाला राक्षस चामर हाथी पर चढ़कर आया। उसने भी देवी के ऊपर शक्ति का प्रहार किया, किन्तु जगदम्बा ने उसे अपने हुंकार से ही आहत एवं निष्प्रभ करके तत्काल पृथ्वी पर डाल दिया। शक्ति को टूटकर गिरी हुई देख चामर को बड़ा क्रोध हुआ। अब उसने शूल चला, किन्तु देवी ने उसे भी

बाणों द्वारा काट डाला। इतने में ही देवी का सिंह उछलकर हाथी के मस्तक पर चढ़ बैठा और उस दैत्य के साथ बाहुयुद्ध करने लगा। वे दोनों लड़ते-लड़ते हाथी से उतरकर पृथ्वी पर आ गए और अत्यन्त क्रोध से भरकर एक-दूसरे पर बड़े भयंकर प्रहार करते हुए लड़ने लगे।

तदनन्तर सिंह बड़े वेग से आकाश की ओर उछला और उधर से गिरते समय उसने पंजों की मार से चामर का सिर धड़ से अलग कर दिया। इसी प्रकार राक्षस उदग्र भी शिला और वृक्ष आदि की मार खाकर रणभूमि में देवी के हाथों से मारा गया तथा दैत्य कराल भी दाँतों, मुक्कों और थप्पड़ों की चोट से धराशायी हो गया। क्रोध से भरी हुई देवी ने गदा की चोट से उद्धत दैत्य का कचूमर निकाल डाला। इसी तरह भिन्दिपाल से वाष्कल को तथा बाणों से ताम्र और अन्धक को मौत के घाट उतार दिया। तीन नेत्रों वाली परमेश्वरी ने त्रिशूल से उग्रास्य, उग्रवीर्य तथा महाहनु नामक दैत्यों को मार डाला। तलवार की चोट से बिडाल के मस्तक को धड़ से काट गिराया। दुर्धर और दुर्मुख–इन दोनों दैत्यों को भी अपने बाणों से यमलोक भेज दिया।

इस प्रकार अपनी सेना का संहार करते देख महिषासुर ने भैंसे का रूप धारण करके देवी के गणों को त्रास देना आरम्भ किया। किन्हीं को थूथुन से मारकर, किन्हीं के ऊपर खुरों का प्रहार करके, किन्हीं-किन्हीं को पूँछ से चोट पहुँचाकर, कुछ को सींगों से विदीर्ण करके, कुछ गणों को वेग से, किन्हीं को सिंहनाद से, कुछ को चक्कर देकर और कितनों को निःश्वास-वायु के झोकों से धराशायी कर दिया।

इस प्रकार गणों की सेना को गिराकर वह असुर महादेवी के सिंह को मारने के लिए झपटा। इससे जगदम्बा को बड़ा क्रोध आया। उधर महापराक्रमी महिषासुर भी क्रोध से भरकर धरती को खुरों से खोदने लगा तथा अपने सींगों से ऊँचे-ऊँचे पर्वतों को उठाकर फेंकने और गर्जने लगा। उसके वेग से चक्कर देने के कारण पृथ्वी क्षुब्ध होकर फटने लगी। उसकी पूँछ से समुद्र चारों ओर से धरती को डुबाने लगा। उसके हिलते हुए सींगों के आघात के कारण बादलों के खण्ड-खण्ड हो गए।

इस प्रकार क्रोध से भरे हुए उस महादैत्य को अपनी ओर आते देख

चण्डिका ने उसका वध करने के लिए महान क्रोध किया। देवी ने पाश फेंककर उस महान असुर को बाँध लिया। उस महासंग्राम में बंध जाने पर उसने भैंसे का रूप त्याग दिया और तत्काल सिंह के रूप में वह प्रकट हो गया। उस अवस्था में जगदम्बा ज्यों ही उसका मस्तक काटने को तत्पर हुईं, त्यों ही वह खड्गधारी पुरुष के रूप में दिखाई देने लगा।

तब देवी ने तुरंत ही बाणों की वर्षा करके ढाल और तलवार के साथ उस पुरुष को भी मर्माहत कर दिया। इतने में ही वह महान गजराज के रूप में परिणत हो गया। तब वह अपनी सूँड़ से देवी के विशाल सिंह को खींचने और गर्जने लगा। खींचते समय देवी ने तलवार से उसकी सूँड़ काट डाली।

अब उस महादैत्य ने पुनः भैंसे का शरीर धारण कर लिया और पहले की भाँति चराचर प्राणियों सहित तीनों लोकों को व्याकुल करने लगा। तब क्रोध से भरी हुई चण्डिका बारम्बार उत्तम मधु का पान करने लगीं और लाल आँखें करके हँसने लगीं। उधर से वह बल और पराक्रम के मद से उन्मत्त हुआ राक्षस

गर्जने लगा और अपने सींगों से चण्डी के ऊपर पर्वतों को फेंकने लगा। उसी समय देवी अपने बाणों के समूहों से उसके फेंके हुए पर्वतों को चूर्ण करती हुई बोलीं। बोलते समय उनका मुख मधु के मद से लाल हो रहा था और वाणी लड़खड़ा रही थी।

देवी ने कहा–अरे मूढ़ ! मैं जब तक मधु पीती हूँ, तब तक तू क्षणभर के लिए खूब गरज ले। मेरे हाथ से यहीं तेरी मृत्यु हो जाने पर अब शीघ्र ही देवता भी गर्जना (जयघोष) करेंगे।

श्री मार्कण्डेय जी बोले–ऐसा कहकर देवी उछलीं और उस महादैत्य के ऊपर चढ़ गईं। फिर अपने पैर से उसे दबाकर उन्होंने शूल से उसके कण्ठ में आघात किया। उनके पैर से दबा होने पर भी महिषासुर अपने मुख से दूसरे रूप में बाहर होने लगा। अभी आधे शरीर से ही वह बाहर निकलने पाया था कि देवी ने अपने प्रभाव से उसे रोक दिया। आधा निकला होने पर भी वह महादैत्य देवी से युद्ध करने लगा।

तब देवी ने बहुत बड़ी तलवार से उसका मस्तक काट गिराया। फिर तो

हाहाकार करती हुई दैत्यों की सारी सेना भाग गई तथा सम्पूर्ण देवता प्रसन्न हो गए। देवताओं ने दिव्य महर्षियों के साथ दुर्गा देवी का स्तवन किया। गन्धर्वराज गाने लगे तथा अप्सराएँ नृत्य करने लगीं।

चौथा अध्याय

देवताओं द्वारा देवी की स्तुति

श्री मार्कण्डेय जी बोले–अत्यन्त पराक्रमी दुरात्मा महिषासुर तथा उसकी दैत्य-सेना के देवी के हाथों से मारे जाने पर इन्द्र आदि देवता प्रणाम के लिए गर्दन तथा कंधे झुकाकर उन भगवती दुर्गा का उत्तम वचनों द्वारा स्तवन करने लगे। उस समय उनके सुन्दर अंगों में अत्यन्त हर्ष के कारण रोमांच हो आया था।

देवता बोले–'सम्पूर्ण देवताओं की शक्ति का समुदाय ही जिनका स्वरूप है तथा जिन देवी ने अपनी शक्ति से सम्पूर्ण जगत को व्याप्त कर रखा है,

समस्त देवताओं और महर्षियों की पूजनीया उन जगदम्बा को हम भक्तिपूर्वक नमस्कार करते हैं। वे हम लोगों का कल्याण करें। जिनके अनुपम प्रभाव और बल का वर्णन करने में भगवान शेषनाग, ब्रह्माजी तथा महादेव जी भी समर्थ नहीं हैं, वे भगवती चण्डिका जगत का पालन एवं अशुभ भय का नाश करने का विचार करें। जो पुण्यात्माओं के घरों में स्वयं ही लक्ष्मीरूप से, पापियों के यहाँ दरिद्रतारूप से, शुद्ध अन्तःकरण वाले पुरुषों के हृदय में बुद्धि रूप से, सत्पुरुषों में श्रद्धारूप से तथा कुलीन मनुष्यों में लज्जारूप से निवास करती हैं. उन भगवती दुर्गा को हम नमस्कार करते हैं। देवी ! आप सम्पूर्ण विश्व का पालन कीजिए। देवी ! आपके इस अचिन्त्य रूप का, असुरों का नाश करने वाले भारी पराक्रम का तथा समस्त देवताओं और दैत्यों के समक्ष युद्ध में प्रकट किए हुए आपके अद्भुत चरित्रों का हम किस प्रकार वर्णन करें। आप सम्पूर्ण जगत की उत्पत्ति का कारण हैं। आप में सत्वगुण, रजोगुण और तमोगुण–ये तीन गुण विद्यमान हैं तो भी दोषों के साथ आपका सम्पर्क नहीं जान पड़ता। भगवान् विष्णु और महादेव जी

आदि देवता भी आपका पार नहीं पाते। आप ही समस्त अखिल का आश्रय हैं। यह समस्त जगत आपका अंशभूत है, क्योंकि आप सबकी आदिभूत अव्यक्त परा प्रकृति हैं।

देवी ! सम्पूर्ण यज्ञों में जिनके उच्चारण से सब देवता तृप्ति लाभ करते हैं, वह स्वाहा आप ही हैं। इसके अतिरिक्त आप पितरों को भी तृप्ति का कारण हैं, अतएव सब लोग आपको स्वधा भी कहते हैं। देवी ! जो मोक्ष की प्राप्ति का साधन है, अचिन्त्य है, समस्त दोषों से रहित, जितेन्द्रिय, तत्वों को ही सार वस्तु मानने वाले तथा मोक्ष की अभिलाषा रखने वाले मुनिजन जिनका अभ्यास करते हैं, वह भगवती आप ही हैं। आप शब्दरूपा हैं, अत्यन्त निर्मल ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा उद्गीथ के मनोहर पदों के पाठ से युक्त सामवेद का भी आधार आप ही हैं। आप देवी, त्रयी (तीनों वेद) और भगवती (छहों ऐश्वर्य से युक्त) हैं। इस विश्व की उत्पत्ति एवं पालन के लिए आप ही वार्ता (कृषि एवं आजीविका) के रूप में प्रकट हुई हैं। आप सम्पूर्ण जगत की पीड़ा का नाश करने वाली हैं, देवी ! जिससे समस्त शास्त्रों के सार का ज्ञान होता है,

नाश करने वाली है, देवी ! जिससे समस्त शास्त्रों के सार का ज्ञान होता है,

वह मेधा शक्ति आप ही हैं। दुर्गम भवसागर से पार उतारने वाली नौकारूप दुर्गा देवी भी आप ही हैं। आपकी कहीं भी आसक्ति नहीं हैं। कैटभ के शत्रु भगवान् विष्णु के वक्षस्थल में एकमात्र निवास करने वाली भगवती लक्ष्मी तथा भगवान् चन्द्रशेखर द्वारा सम्मानित गौरी देवी भी आप ही हैं। आपका मुख मन्द मुस्कान से सुशोभित, निर्मल, पूर्ण चन्द्रमा के बिम्ब का अनुकरण करने वाला और उत्तम स्वर्ण की मनोहर कान्ति से कमनीय है तो भी उसे देखकर महिषासुर को क्रोध हुआ और सहसा उसने उस पर प्रहार कर दिया, यह बड़े आश्चर्य की बात है। देवी ! वही मुख जब क्रोध से युक्त होने पर उदयकाल के चन्द्रमा की भाँति लाल और तनी हुई भौंहों के कारण विकराल हो उठा, तब उसे देखकर जो महिषासुर के प्राण तुरन्त नहीं निकल गए, यह उससे भी बढ़कर आश्चर्य की बात है, क्योंकि क्रोध में भरे हुए यमराज को देखकर भला कौन जीवित रह सकता है ?

देवी ! आप प्रसन्न हों। परमात्मस्वरूपा आपके प्रसन्न होने पर जगत का अभ्युदय होता है और क्रोध में भर जाने पर आप तत्काल ही कितने कुलों

का सर्वनाश कर डालती हैं, यह बात अभी अनुभव में आयी है, क्योंकि महिषासुर की यह विशाल सेना क्षणभर में आपके कोप से नष्ट हो गई है। सदा अभ्युदय प्रदान करने वाली आप जिन पर प्रसन्न रहती हैं, वे ही देश में सम्मानित हैं, उन्हीं को धन और यश की प्राप्ति होती है, उन्हीं का धर्म कभी शिथिल नहीं होता तथा वे ही अपने हृष्ट-पुष्ट, स्त्री-पुत्र और भृत्यों के साथ धन्य माने जाते हैं। देवी ! आपकी ही कृपा से पुण्यात्मा पुरुष प्रतिदिन अत्यन्त श्रद्धापूर्वक सदा सब प्रकार के धर्मानुकूल कर्म करता है और उनके प्रभाव से स्वर्गलोक को जाता है, इसलिए आप तीनों लोकों में निश्चय ही मनोवाञ्छित फल देने वाली हैं। माँ दुर्गे ! आप स्मरण करने पर सब प्राणियों का भय हर लेती हैं और स्वस्थ पुरुषों द्वारा चिन्तन करने पर उन्हें परम कल्याणमयी बुद्धि प्रदान करती हैं। दुःख, दरिद्रता और भय हरने वाली देवी ! आपके सिवा दूसरी कौन है, जिसका चित्त सबका उपकार करने के लिए सदा ही दयालु रहता हो।

देवी ! इन राक्षसों के मारने से संसार को सुख मिले तथा ये राक्षस

चिरकाल तक नरक में रहने के लिए भले ही पाप करते रहे हों, इस समय संग्राम में मृत्यु को प्राप्त होकर स्वर्गलोक में जाएं; निश्चय ही यही सोचकर आप शत्रुओं का वध करती हैं। आप शत्रुओं पर शस्त्रों का प्रहार क्यों करती हैं ? समस्त असुरों को दृष्टिपात मात्र से ही भस्म क्यों नहीं कर देतीं ? इसमें एक रहस्य है। ये शत्रु भी हमारे शस्त्रों से पवित्र होकर उत्तम लोक को जाएं—इस प्रकार उनके प्रति भी आपका विचार अत्यन्त उत्तम रहता है। खड्ग के तेजपुञ्ज की भयङ्कर दीप्ति से तथा आपके त्रिशूल के अग्रभाग की घनीभूत प्रभा से चौंधियाकर जो असुरों की आँखें फूट नहीं गईं, उसमें कारण यह था कि वे मनोहर रश्मियों से युक्त चन्द्रमा के समान आनन्द प्रदान करने वाले आपके इस सुन्दर मुख का दर्शन करते थे।

देवी ! आपका शील दुराचारियों के बुरे बर्ताव को दूर करने वाला है। साथ ही यह रूप ऐसा है, जो कभी चिन्तन में भी नहीं आ सकता और जिसकी कभी दूसरों से तुलना भी नहीं हो सकती तथा आपका बल और पराक्रम तो उन दैत्यों का भी नाश करने वाला है, जो कभी देवताओं के

पराक्रम को भी नष्ट कर चुके थे। इस प्रकार आपने शत्रुओं पर भी अपनी दया ही प्रकट की है। वरदायिनी देवी ! आपके इस पराक्रम की किसके साथ तुलना हो सकती है तथा शत्रुओं को भय देने वाला एवं अत्यन्त मनोहर ऐसा रूप भी आपके अतिरिक्त और कहाँ है ? हृदय में कृपा और युद्ध में निष्ठुरता–ये दोनों बातें तीनों लोकों के भीतर केवल आप में ही देखी गई हैं।

हे माते ! आपने शत्रुओं का नाश करके इस समस्त त्रिलोकी की रक्षा की है। उन शत्रुओं को भी युद्ध भूमि में मारकर स्वर्गलोक में पहुँचाया है तथा उन्मत्त दैत्यों से प्राप्त होने वाले हम लोगों के भय को भी दूर कर दिया है, आपको हमारा नमस्कार है। हे देवी ! आप शूल से हमारी रक्षा करें। अम्बिके ! आप खड्ग से भी हमारी रक्षा करें तथा घण्टा की ध्वनि और धनुष की टङ्कार से भी हम सबकी रक्षा करें।

चण्डिके ! पूर्व, पश्चिम और दक्षिण दिशा में आप हमारी रक्षा करें। ईश्वरी ! अपने त्रिशूल को घुमाकर आप उत्तर दिशा में भी हमारी रक्षा करें।

तीनों लोकों में आपके जो परम सुन्दर एवं अत्यन्त भयंकर रूप विचरते रहते हैं, उनके द्वारा भी आप हमारी तथा इस भूलोक की रक्षा करें।

अम्बिके ! आपके हाथों में शोभा पाने वाले खड्ग, शूल और गदा आदि जो-जो अस्त्र हों, उन सबके द्वारा आप सब ओर से हमलोगों की रक्षा करें।

श्री मार्कण्डेय जी बोले–इस प्रकार जब देवताओं ने जगन्माता दुर्गा की स्तुति की और नन्दन-वन के दिव्य पुष्पों एवं गन्ध-चन्दन आदि के द्वारा उनका पूजन किया, फिर सबने मिलकर जब भक्तिपूर्वक दिव्य धूपों की सुगन्ध निवेदित की, तब देवी ने प्रसन्नवदन होकर प्रणाम करते हुए सब देवताओं से कहा, देवी बोलीं–देवताओं ! तुम सब मुझसे जिस वस्तु की कामना रखते हो, उसे माँगो। देवता बोले–भगवती आपने हमारी सब इच्छाएं पूर्ण कर दीं, अब कुछ भी बाकी नहीं है, क्योंकि हमारा यह शत्रु महिषासुर मारा गया। महेश्वरी ! इतने पर भी यदि आप हमें और वर देना चाहती हैं, तो हम जब-जब आपका स्मरण करें, तब-तब आप दर्शन देकर हमारा महान

संकट दूर कर दिया करें। अम्बिके ! जो मनुष्य इन स्तोत्रों द्वारा आपकी स्तुति करे, उसे वित्त, समृद्धि और वैभव देने के साथ ही उसका धन और स्त्री आदि सम्पत्ति को भी बढ़ाने के लिए आप सदा हम पर कृपालु रहें। ऋषि बोले–राजन् ! देवताओं ने जब अपने तथा जगत के कल्याण के लिए भद्रकाली देवी को इस प्रकार प्रसन्न किया, तब वे 'तथास्तु' कहकर वहीं अन्तर्धान हो गईं। भूपाल ! इस प्रकार पूर्वकाल में तीनों लोकों का हित चाहने वाली देवी जिस प्रकार देवताओं के शरीर से प्रकट हुई थीं; वह सब कथा मैंने तुम्हें कह सुनायी।

अब पुनः देवताओं का उपकार करने वाली वे देवी दुष्ट दैत्यों तथा शुम्भ-निशुम्भ का वध करने एवं सब लोकों की रक्षा करने के लिए गौरी देवी के शरीर से जिस प्रकार प्रकट हुई थीं, वह सब प्रसङ्ग मेरे मुख से सुनो। मैं उसका तुमसे वर्णन करता हूँ।

४

चौथा दिन : कूष्माण्डा

सुरासम्पूर्णकलशं रुधिराप्लुतमेव च।
दधाना हस्तपद्माभ्यां कूष्माण्डा शुभदास्तुमे॥

माँ दुर्गा के चौथे स्वरूप का नाम कूष्माण्डा है। अपनी मन्द, हल्की मुस्कान द्वारा ब्रह्माण्ड को उत्पन्न करने के कारण इनका नाम कूष्माण्डा पड़ा। नवरात्रों में चौथे दिन कूष्माण्डा देवी के स्वरूप की उपासना की जाती है। इस दिन साधक का मन 'अनाहत' चक्र में स्थित होता है। अतः पवित्र मन से पूजा-उपासना के कार्य में लगना चाहिए। माँ की उपासना मनुष्य को स्वाभाविक रूप से भवसागर से पार उतरने के लिए सुगम और श्रेयस्कर मार्ग है। माता कूष्माण्डा की उपासना मनुष्य को आधिव्याधियों से विमुक्त करके उसे सुख समृद्धि और उन्नति की ओर ले जाती है। अतः अपनी लौकिक, पारलौकिक उन्नति चाहने वालों को कूष्माण्डा देवी की उपासना में हमेशा तत्पर रहना चाहिए।

पांचवाँ अध्याय

देवी की स्तुति—अम्बिका के रूप की प्रशंसा

श्री मार्कण्डेय जी बोले—पूर्वकाल में निशुम्भ और शुम्भ नामक असुरों ने अपने बल के घमण्ड में आकर शचीपति इन्द्र के हाथ से तीनों लोकों का राज्य और यज्ञभाग छीन लिए। वे ही दोनों सूर्य, चन्द्रमा, कुबेर, यम और वरुण के अधिकार का भी उपभोग करने लगे। वायु और अग्नि का कार्य भी वे ही करने लगे। उन दोनों ने सब देवताओं को अपमानित, राज्य भ्रष्ट, पराजित तथा अधिकारहीन करके स्वर्ग से निकाल दिया। उन दोनों महान असुरों से तिरस्कृत देवताओं ने अपराजिता देवी का स्मरण किया और सोचा—'जगदम्बा ने हम लोगों को वर दिया था कि आपत्तिकाल में याद करने पर मैं तुम्हारी सब आपत्तियों को तत्काल नाश कर दूँगी।' यह विचार कर देवता गिरिराज हिमालय पर गए और वहाँ भगवती विष्णुमाया की स्तुति करने लगे।

देवता बोले–देवी को नमस्कार है, महादेवी शिवा को नमस्कार है। प्रकृति एवं भद्रा को प्रणाम है। हमलोग नियमपूर्वक जगदम्बा को नमस्कार करते हैं। रौद्रा को नमस्कार है। नित्या, गौरी एवं धात्री को नमस्कार है। ज्योत्स्नामयी, चन्द्ररूपिणी एवं सुखस्वरूपा देवी को सतत् प्रणाम है। शरणागतों का कल्याण करने वाली वृद्धि एवं सिद्धि रूपा देवी को हम बारम्बार नमस्कार करते हैं। नैर्ऋती (राक्षसों की लक्ष्मी), राजाओं की लक्ष्मी तथा शर्वाणी (शिव पत्नी) स्वरूपा आप जगदम्बा को हमारा बारम्बार नमस्कार है। दुर्गा, दुर्गपारा (दुर्गम संकट से पार उतारने वाली), सारा (सबकी आधारभूता), सर्वकारिणी, ख्याति, कृष्णा और धूम्रादेवी को सर्वदा नमस्कार है। अत्यन्त सौम्य तथा अत्यन्त रौद्ररूपा देवी को हम नमस्कार करते हैं, उन्हें हमारा बारम्बार प्रणाम है। जगत की आधारभूता कृति देवी को बारम्बार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में विष्णुमाया के नाम से जानी जाती हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में चेतना कहलाती हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको

बारम्बार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में बुद्धिरूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में निद्रारूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में क्षुधारूप में स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में छायारूप में स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में शक्ति रूप में स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में तृष्णारूप में स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में क्षान्ति (क्षमा) रूप में स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में जातिरूप में स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में लज्जारूप में स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों

शान्तिरूप में स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में श्रद्धारूप में स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में कान्तिरूप में स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में लक्ष्मीरूप में स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में वृत्तिरूप में स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में स्मृतिरूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में दयारूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में तुष्टिरूप में स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में मातृरूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है। जो देवी सब प्राणियों में भ्रान्ति रूप से स्थित हैं, उनको

नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है। जो जीवों के इन्द्रिय वर्ग की अधिष्ठात्री देवी एवं सब प्राणियों में सदा व्याप्त रहने वाली हैं, उन व्याप्ति देवी को नमस्कार है। जो देवी चैतन्यरूप से इस सम्पूर्ण जगत को व्याप्त करके स्थित हैं, उनको नमस्कार, उनको नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है।

पूर्वकाल में अपने अभीष्ट की प्राप्ति होने से देवताओं ने जिनकी स्तुति की तथा देवराज इन्द्र ने बहुत दिनों तक जिनका सेवन किया, वह कल्याण की साधनाभूत ईश्वरी हमारा कल्याण और मंगल करें तथा सारी आपत्तियों का नाश कर डालें। उद्दण्ड दैत्यों से सताये हुए हम सभी देवता जिन परमेश्वरी को इस समय नमस्कार करते हैं तथा जो भक्ति से विनम्र पुरुषों द्वारा स्मरण की जाने पर तत्काल ही सम्पूर्ण विपत्तियों का नाश कर देती हैं, वे जगदम्बा हमारा संकट दूर करें।

ऋषि बोले–राजन् ! इस प्रकार जब देवता स्तुति कर रहे थे, उस समय पार्वती देवी गंगा जी के जल में स्नान करने के लिए वहाँ आईं, उन सुन्दर

भौंहों वाली भगवती ने देवताओं से पूछा–'आप लोग यहाँ किसकी स्तुति कर रहे हैं ?' तब उन्हीं के शरीर से प्रकट हुई शिवा देवी बोलीं–

'शुम्भ दैत्य से तिरस्कृत हुए और युद्ध में निशुम्भ से पराजित होकर यहाँ एकत्रित हुए ये समस्त देवता मेरी ही स्तुति कर रहे हैं।' पार्वती जी के शरीरकोश से अम्बिका का प्रादुर्भाव हुआ था, इसलिए ये समस्त लोकों में 'कौशिकी' कही जाती हैं। कौशिकी के प्रकट होने के बाद पार्वती देवी का शरीर काले रंग का हो गया, अतः वे हिमालय पर निवास करने वाली कालिका देवी के नाम से विख्यात हुईं।

तदन्तर शुम्भ-निशुम्भ के भृत्य चण्ड-मुण्ड वहाँ आए और उन्होंने परम मनोहर रूप धारण करने वाली अम्बिका देवी को देखा।

फिर वे शुम्भ के पास जाकर बोले–'महाराज ! एक अत्यन्त मनोहर स्त्री है, जो अपनी दिव्य कान्ति से हिमालय को प्रकाशित कर रही है। वैसा उत्तम रूप कहीं किसी ने भी नहीं देखा होगा।

हे असुरेश्वर ! पता लगाइये, वह देवी कौन है और उसे प्राप्त कीजिए।

स्त्रियों में तो वह रत्न है, उसका प्रत्येक अंग बहुत ही सुन्दर है तथा वह अपने श्रीअंगों की प्रभा से सम्पूर्ण दिशाओं में प्रकाश फैला रही है।

दैत्यराज ! अभी वह हिमालय पर ही स्थित है, आप उसे देख सकते हैं। प्रभो ! तीनों लोकों में मणि, हाथी और घोड़े आदि जितने भी रत्न हैं, वे सब इस समय आपके घर में शोभा पा रहे हैं। हाथियों में रत्नभूत ऐरावत, यह पारिजात का वृक्ष और यह उच्चैःश्रवा घोड़ा–यह सब आपने इन्द्र से ले लिया है। हंसों से युक्त यह विमान भी आपके आंगन में शोभा पाता है। यह रत्नभूत अद्भुत विमान, जो पहले ब्रह्माजी के पास था, अब आपके यहाँ लाया गया है। यह महापद्म नामक निधि आप कुबेर से छीन लाए हैं। समुद्र ने आपको किञ्जल्किनी नाम की माला भेंट की है, जो केसरों से सुशोभित है और जिसके कमल कभी कुम्हलाते नहीं हैं। सुवर्ण की वर्षा करने वाला वरुण का छत्र भी आपके घर में शोभा पाता है तथा यह सर्वश्रेष्ठ रथ, जो पहले प्रजापति के अधिकार में था, अब आपके अधिकार में है।

दैत्येश्वर ! मृत्यु की उत्क्रन्तिदा नाम वाली शक्ति को भी आपने छीना है

तथा वरुण का पाश और समुद्र में उत्पन्न होने वाले सब प्रकार के रत्न आपके भाई निशुम्भ के अधिकार में हैं। अग्नि ने भी स्वतः शुद्ध किए हुए दो वस्त्र आपकी सेवा में अर्पित किए हैं।

दैत्यराज ! इस प्रकार सभी रत्न आपने एकत्र कर लिए हैं। फिर जो यह स्त्रियों में रत्नरूपी कल्याणमयी देवी है, इसे आप अपने अधिकार में क्यों नहीं कर लेते ?

ऋषि बोले–चण्ड-मुण्ड का यह वचन सुनकर शुम्भ ने महादैत्य सुग्रीव को दूत बनाकर देवी के पास भेजा और कहा–'तुम मेरी आज्ञा से उसके सामने ये-ये बातें कहना और ऐसा उपाय करना, जिससे प्रसन्न होकर वह शीघ्र ही यहाँ आ जाए।' वह दूत पर्वत के अत्यन्त रमणीय प्रदेश में, जहाँ वह देवी सुशोभित थीं, वहाँ गया और मधुरवाणी में कोमल वचन बोला।

दूत बोला–देवी ! दैत्यराज शुम्भ इस समय तीनों लोकों के परमेश्वर हैं। मैं उन्हीं का भेजा हुआ दूत हूँ और यहाँ तुम्हारे ही पास उपस्थित हुआ हूँ। उनकी

आज्ञा सदा सब देवता एक स्वर में मानते हैं। कोई उसका उल्लंघन नहीं कर सकता। वे सम्पूर्ण देवताओं को परास्त कर चुके हैं। उन्होंने तुम्हारे लिए जो संदेश दिया है, उसे सुनो। 'सम्पूर्ण त्रिलोकी मेरे अधिकार में है। देवता भी मेरी आज्ञा के अधीन चलते हैं। सम्पूर्ण यज्ञों के भागों को मैं ही भोगता हूँ। तीनों लोकों में जितने श्रेष्ठ रत्न हैं, वे सब मेरे अधिकार में हैं। देवराज इन्द्र का वाहन ऐरावत, जो हाथियों में रत्न के समान है, उसे मैंने छीन लिया है। क्षीर सागर का मन्थन करने से जो अश्व-रत्न उच्चैःश्रवा प्रकट हुआ है, उसे देवताओं ने मेरे पैरों पर पड़कर समर्पित किया है।

सुन्दरी ! उनके अतिरिक्त और भी जितने रत्नभूत पदार्थ देवताओं, गन्धर्वों और नागों के पास थे, वे सब मेरे ही पास आ गए हैं।

देवी ! हमलोग तुम्हें संसार की स्त्रियों में रत्न मानते हैं, अतः तुम हमारे पास आ जाओ; क्योंकि रत्नों का उपभोग करने वाले हम ही हैं। चंचल कटाक्षों वाली सुन्दरी ! तुम मेरी या मेरे महापराक्रमी भाई निशुम्भ की सेवा में आ जाओ; क्योंकि तुम रत्नस्वरूपा हो। इस प्रकार मेरा वरण करने से तुम्हें

जाओ; क्योंकि तुम रत्नस्वरूपा हो। इस प्रकार मेरा वरण करने से तुम्हें

अतुलित महान ऐश्वर्य की प्राप्ति होगी। अपनी बुद्धि से यह विचार कर तुम मेरी पत्नी बन जाओ।'

ऋषि बोले–दूत के यह कहने पर कल्याणमयी भगवती दुर्गा देवी, जो इस जगत को धारण करती हैं, मन-ही-मन गम्भीर भाव से मुसकायीं और इस प्रकार बोलीं–

देवी ने कहा–दूत ! तुमने सत्य कहा है, इसमें तनिक भी झूठ नहीं है कि शुम्भ तीनों लोकों का स्वामी है और निशुम्भ भी उसी के समान पराक्रमी है, किन्तु इस विषय में मैंने जो प्रतिज्ञा कर ली है, उसे झूठी कैसे करूँ ? मैंने अपनी अल्पबुद्धि के कारण पहले से जो प्रतिज्ञा कर रखी है, उसे सुनो–

'जो मुझे संग्राम में जीत लेगा, जो मेरे अभिमान को चूर्ण कर देगा तथा संसार में जो मेरे समान बलवान होगा, वहीं मेरा स्वामी होगा।' इसलिए शुम्भ अथवा महादैत्य निशुम्भ स्वयं ही यहाँ पधारें और मुझे जीतकर शीघ्र ही मेरा पाणिग्रहण कर लें, इसमें विलम्ब की क्या आवश्यकता है ?

दूत बोला–देवी ! तुम अभिमान में भरी हो, मेरे सामने ऐसी बातें मत करो। तीनों लोकों में कौन ऐसा मनुष्य है जो शुम्भ-निशुम्भ के सामने खड़ा हो सके। देवी ! अन्य दैत्यों के सामने भी सारे देवता युद्ध में नहीं ठहर सकते, फिर तुम अकेली स्त्री होकर कैसे ठहर सकती हो ? जिन शुम्भ आदि दैत्यों के सामने इन्द्र आदि देवता भी युद्ध में खड़े नहीं हुए, उनके सामने तुम स्त्री होकर कैसे टिक सकोगी। इसलिए तुम मेरे ही कहने से शुम्भ-निशुम्भ के पास बेहिचक चली चलो। ऐसा करने से तुम्हारे गौरव की रक्षा होगी; अन्यथा जब वे केश पकड़कर घसीटेंगे, तब तुम्हें अपना गौरव गंवाकर जाना पड़ेगा।

देवी ने कहा–तुम्हारा कहना ठीक है, शुम्भ बलवान है और निशुम्भ भी बड़ा पराक्रमी है, परन्तु क्या करूँ ? मैंने पहले बिना सोचे-समझे प्रतिज्ञा कर ली है। अतः अब तुम जाओ; मैंने तुमसे जो कुछ कहा है, वह सब दैत्यराज से आदरपूर्वक कहना। फिर जो उचित जान पड़े, वह कर लें।

छठा अध्याय

धूम्रलोचन वध

श्री मार्कण्डेय जी बोले–देवी का यह कथन सुनकर दूत को बड़ा आश्चर्य हुआ और उसने दैत्यराज के पास जाकर सब समाचार विस्तारपूर्वक कह सुनाया। दूत की बातों को सुनकर दैत्यराज कुपित हो उठा और वह सेनापति धूम्रलोचन से बोला–धूम्रलोचन ! तुम शीघ्र अपनी सेना साथ लेकर जाओ और उस दुष्टा के केश पकड़कर घसीटते हुए उसे बलपूर्वक यहाँ ले आओ। यदि उसकी रक्षा करने के लिए कोई दूसरा खड़ा हो तो वह देवता, यक्ष अथवा गन्धर्व ही क्यों न हो, उसे अवश्य मार डालना।

ऋषि बोले–शुम्भ के इस प्रकार आज्ञा देने पर वह धूम्रलोचन दैत्य साठ हजार असुरों की सेना साथ लेकर वहाँ से तुरन्त चल दिया। वहाँ पहुँचकर उसने हिमालय पर रहने वाली देवी को देखा और ललकार कर कहा–'अरी !

तू शुम्भ-निशुम्भ के पास चल। यदि इस समय प्रसन्नतापूर्वक मेरे स्वामी के समीप नहीं चलेगी तो मैं तुझे बलपूर्वक बालों को पकड़कर घसीटते हुए ले चलूँगा।' देवी बोलीं–तुम्हें दैत्यों के राजा ने भेजा है, तुम स्वयं भी बलवान हो और तुम्हारे साथ विशाल सेना भी हैं; ऐसी दशा में यदि मुझे बलपूर्वक ले चलोगे तो मैं तुम्हारा क्या कर सकती हूँ।

ऋषि बोले–देवी के यह कहने पर असुर धूम्रलोचन उनकी ओर लपका; तब अम्बिका ने 'हूँ' शब्द के उच्चारण मात्र से उसे भस्म कर दिया। फिर तो क्रोध से भरी हुई दैत्यों की विशाल सेना और अम्बिका ने एक-दूसरे पर तीखे सायकों, शक्तियों तथा फरसों की वर्षा आरम्भ की। इतने में ही देवी का वाहन सिंह क्रोध में भरकर भयंकर गर्जना करके गर्दन के बालों को हिलाता हुआ असुरों की सेना में कूद पड़ा। उसने कुछ दैत्यों को पंजों की मार से, कितनों को अपने जबड़े से और कितने ही महादैत्यों को पटककर दाढ़ों से घायल करके मार डाला। उस सिंह ने अपने नखों से कितनों के पेट फाड़ डाले और थप्पड़ मारकर कितनों के सिर धड़ से अलग कर दिए। देवी के वाहन उस

महाबली सिंह ने अत्यन्त क्रोध से भरे हुए, क्षणभर में ही असुरों की सारी सेना का संहार कर डाला।

शुम्भ ने जब यह सुना कि देवी ने धूम्रलोचन असुर को मार डाला तथा उसके सिंह ने सारी सेना का संहार कर डाला, तब उस दैत्यराज को बड़ा क्रोध हुआ। उसके होंठ काँपने लगे, तुरन्त उसने चण्ड और मुण्ड नामक दो महादैत्यों को आज्ञा दी–'हे चण्ड ! और हे मुण्ड ! तुम लोग बहुत बड़ी सेना लेकर वहाँ जाओ और उस देवी को बालों से पकड़कर अथवा उसे बाँधकर शीघ्र यहाँ ले आओ। यदि इस प्रकार उसे लाने में संदेह हो तो युद्ध में सब प्रकार के अस्त्रों-शस्त्रों तथा समस्त आसुरी सेना का प्रयोग करके उसकी हत्या कर डालना। उस दुष्टा की हत्या होने पर तथा सिंह के भी मारे जाने पर उस अम्बिका को बाँधकर साथ लेकर शीघ्र ही लौट आना।'

पांचवाँ दिन : स्कन्दमाता

सिंहासनगता नित्यं पद्माश्रितकरद्वया।
शुभदास्तु सदा देवी स्कन्दमाता यशस्विनीं॥

श्री दुर्गा जी के पाँचवें स्वरूप को स्कन्दमाता कहा जाता है। जो भगवान् स्कन्द 'कुमार कार्तिकेय' के नाम से भी जाने जाते हैं। इन्हीं भगवान् स्कन्द अर्थात् कार्तिकेय की माता होने के कारण माँ दुर्गा के इस पाँचवें स्वरूप को स्कन्दमाता के नाम से जाना जाता है। इनकी उपासना नवरात्रि पूजा के पाँचवें दिन की जाती है। इस दिन साधक का मन 'विशुद्ध' चक्र में स्थित रहता है। इनका वर्ण शुभ्र है। ये कमल के आसन पर विराजमान हैं, इसलिए इन्हें पद्मासना देवी भी कहा जाता है। इनका वाहन भी सिंह है।

नवरात्र-पूजा के पाँचवें दिन का शास्त्रों में पुष्कल महत्व बताया गया है। इस चक्र में अवस्थित रहने वाले साधक की समस्त बाह्य क्रियाओं एवं चित्त वृत्तियों का लोप हो जाता है।

अवस्थित रहने वाले साधक की समस्त बाह्य क्रियाओं एवं चित्त वृत्तियों का लोप हो जाता है।

सातवाँ अध्याय

चण्ड-मुण्ड का वध

श्री मार्कण्डेय जी बोले–तदन्तर शुम्भ की आज्ञा पाकर वे चण्ड-मुण्ड आदि दैत्य चतुरंगिणी सेना के साथ अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित होकर चल दिए। फिर गिरिराज हिमालय के स्वर्णमय ऊँचे शिखर पर पहुँचकर उन्होंने सिंह पर बैठी देवी को देखा। वे मन्द-मन्द मुस्कुरा रही थीं। उन्हें देखकर दैत्य लोग तत्परता से पकड़ने का उद्योग करने लगे। किसी ने धनुष तान लिया, किसी ने तलवार संभाली और कुछ लोग देवी के पास आकर खड़े हो गए। तब अम्बिका ने उन शत्रुओं के प्रति बड़ा क्रोध किया। उस समय क्रोध के कारण उनका मुख काला पड़ गया। ललाट में भौंहें टेढ़ी हो गईं और वहाँ से तुरन्त विकराल मुख वाली काली प्रकट हुईं, जो तलवार और पाश धारण किए हुए थीं। वे विचित्र खट्वाङ्ग धारण किए और चीते के चर्म की साड़ी

पहने हुए नर-मुण्डों की माला से विभूषित थीं। उनके शरीर पर माँस जैसे सूख गया था, मात्र हड्डियों का ढाँचा था, जीभ लपलपाने के कारण वे और भी डरावनी प्रतीत होती थीं। उनकी आँखें भीतर को धँसी हुई और रक्ताभ थीं, वे अपनी भयंकर गर्जना से सम्पूर्ण दिशाओं को गुँजा रही थीं। बड़े-बड़े दैत्यों का वध करती हुई वे कालिका देवी बड़े वेग से दैत्यों की उस सेना पर टूट पड़ीं और सबको भक्षण करने लगीं। वे पार्श्वरक्षकों, अंकुशधारी महावतों, योद्धाओं और घण्टासहित कितने ही हाथियों को एक ही हाथ से पकड़कर मुँह में डाल लेती थीं।

इसी प्रकार घोड़े, रथ और सारथी के सहित रथी सैनिकों को मुँह में डालकर वे बड़े भयानक रूप से उनका चर्वण कर डालती थीं। किसी के बाल पकड़ लेतीं, किसी का गला दबा देतीं, किसी को पैरों से कुचल डालतीं और किसी को धक्के से गिराकर मार डालती थीं। वे असुरों के छोड़े हुए बड़े-बड़े अस्त्र-शस्त्र मुँह में पकड़ लेतीं और रोष में भरकर उनको दाँतों में पीस डालती थीं। काली ने बलवान् एवं दुरात्मा दैत्यों की वह सारी सेना रौंद डाली, खा

डाली और कितनों को मार भगाया। कोई तलवार के घाट उतारे गए, कोई खटवाङ्ग से पीटे गए और कितने ही असुर दाँतों के अग्रभाग से कुचले जाकर मृत्यु को प्राप्त हुए। इस प्रकार देवी ने असुरों की उस सारी सेना को क्षणभर में मार गिराया। यह देख चण्ड उन अत्यन्त भयानक काली देवी की ओर दौड़ा तथा महादैत्य मुण्ड ने भी अत्यन्त भयंकर बाणों की वर्षा से तथा हजारों बार चलाये हुए चक्रों से उन भयानक नेत्रों वाली देवी को आच्छादित कर डाला। वे अनेक चक्र देवी के मुख में समाते हुए ऐसे जान पड़े थे, मानो सूर्य के बहुतेरे मण्डल बादलों के उदर में प्रवेश कर रहे हों। तब भयंकर गर्जना करने वाली काली ने अत्यन्त रोष में भरकर विकट अट्टहास किया। उस समय उनके विकराल बदन के भीतर कठिनता से देखे जा सकने वाले दाँतों की प्रभा से वे अत्यन्त उज्ज्वल दिखायी देती थीं। देवी ने बहुत बड़ी तलवार हाथ में ले 'हं' का उच्चारण करके चण्ड पर धावा किया और उसको बालों से पकड़कर उसी तलवार से उसका सिर काट डाला। चण्ड को मारा गया देखकर मुण्ड भी देवी की ओर दौड़ा। तब देवी ने रोष में भरकर उसे भी तलवार से घायल

करके धरती पर सुला दिया। महापराक्रमी चण्ड और मुण्ड को मारा गया देख मरने से बची हुई बाकी सेना भय से व्याकुल हो चारों ओर भाग गई।

तदनन्तर काली ने चण्ड और मुण्ड का मस्तक हाथ में ले चण्डिका के पास जाकर प्रचण्ड अट्टहास करते हुए कहा–'देवी, मैंने चण्ड और मुण्ड नामक दो महापशुओं को तुम्हें भेंट किया है। अब युद्ध-यज्ञ में तुम शुम्भ और निशुम्भ का स्वयं ही वध करना।' ऋषि बोले–वहाँ लाये हुए उन चण्ड-मुण्ड नामक महादैत्यों को देखकर कल्याणमयी चण्डी ने काली से मधुरिम वाणी से कहा–'देवी ! तुम चण्ड और मुण्ड को लेकर मेरे पास आयी हो, इसलिए ससांर में चामुण्डा के नाम से तुम्हारी ख्याति होगी।'

आठवाँ अध्याय

रक्तबीज वध

श्री मार्कण्डेय जी बोले–चण्ड और मुण्ड नामक दैत्यों के मारे जाने तथा

बहुत-सी सेना का संहार हो जाने पर दैत्यों के राजा प्रतापी शुम्भ के मन में बड़ा क्रोध हुआ और उसने दैत्यों की सम्पूर्ण सेना को युद्ध के लिए प्रस्थान करने की आज्ञा दी।

वह बोला–'आज उदायुध नाम के छियासी दैत्य-सेनापति अपनी सेनाओं के साथ युद्ध के लिए कूच करें। कम्बु नाम वाले दैत्यों के चौरासी सेनानायक अपने बलाबल के साथ यात्रा करें। पचास कोटि वीर्य-कुल के और सौ धौम्र-कुल के असुर सेनापति मेरी आज्ञा से सेना सहित कूच करें। कालक, दौर्हृद, मौर्य और कालकेय असुर भी युद्ध के लिए तैयार होकर मेरी आज्ञा से तुरन्त प्रस्थान करें।' भयानक शासन करने वाला असुरराज शुम्भ इस प्रकार आज्ञा देकर सहस्त्रों बड़ी-बड़ी सेनाओं के साथ युद्ध करने के लिए चला। उसकी अत्यन्त भयंकर सेना आती देख चण्डिका ने अपने धनुष की टङ्कार से पृथ्वी और आकाश के बीच का भाग गुँजा दिया।

राजन् ! तब देवी के सिंह ने भी बड़े जोर-जोर से दहाड़ना आरम्भ किया, फिर अम्बिका ने अपने घण्टे के शब्द से उस ध्वनि को और भी बढ़ा दिया।

धनुष की टङ्कार, सिंह की दहाड़ और घण्टे की ध्वनि से सम्पूर्ण दिशाएँ गूँज उठीं। उस भयंकर शब्द से काली ने अपने विकराल मुख को और भी बढ़ा लिया तथा इस प्रकार वे विजयिनी हुईं। उस तुमुल नाद को सुनकर दैत्यों की सेनाओं ने चारों ओर से आकर चण्डिका देवी, सिंह तथा काली देवी को क्रोधपूर्वक घेर लिया।

राजन् ! इसी बीच में असुरों के विनाश तथा देवताओं के अभ्युदय के लिए ब्रह्मा, शिव, कार्तिकेय, विष्णु तथा इन्द्र आदि देवों की शक्तियाँ, जो अत्यन्त पराक्रम और बल से सम्पन्न थीं, उनके शरीरों से निकलकर उन्हीं के रूप में चण्डिका देवी के पास गईं। जिस देवता का जैसा रूप, जैसी वेश-भूषा और जैसा वाहन है, ठीक वैसे ही साधनों से सम्पन्न हो उसकी शक्तियाँ असुरों से युद्ध करने के लिए आईं। सबसे पहले हंस युक्त विमान पर बैठी हुई अक्षयसूत्र और कमण्डलु से सुशोभित ब्रह्माजी की शक्ति उपस्थित हुई, जिन्हें ब्रह्माणी कहते है। महादेव जी की शक्ति वृषभ पर आरूढ़ हो हाथों में श्रेष्ठ त्रिशूल धारण किए महानाग का कंकण पहने, मस्तक में चन्द्ररेखा से विभूषित होकर

वहाँ आ पहुँचीं। कार्तिकेय जी की शक्तिरूपा जगदम्बिका उन्हीं का रूप धारण किए श्रेष्ठ मयूर पर आरूढ़ होकर हाथ में शक्ति लिए दैत्यों से युद्ध करने के लिए आईं। इसी प्रकार भगवान् विष्णु की शक्ति गरुड़ पर विराजमान हो शंख, चक्र, गदा, शारंग तथा खड्ग हाथ में लिए वहाँ आईं। अनुपम यज्ञवाराह का रूप धारण करने वाले श्रीहरि की जो शक्ति हैं, वह भी वाराह शरीर धारण करके वहाँ उपस्थित हुईं। नारसिंही शक्ति भी नृसिंह के समान शरीर धारण करके वहाँ आईं। उनकी गर्दन के बालों के झटके से आकाश के तारे बिखरे जा रहे थे।

इसी प्रकार इन्द्र की शक्ति वज्र हाथ में लिए गजराज ऐरावत पर बैठकर आईं। उनके भी सहस्र नेत्र थे। इन्द्र का जैसा रूप है, वैसा ही उनका भी था। तदनन्तर उन देव शक्तियों से घिरे हुए महादेव जी ने चण्डिका से कहा—'मेरी प्रसन्नता के लिए तुम शीघ्र ही इन असुरों का संहार करो।' तब देवी के शरीर से अत्यन्त भयानक और परम उग्र चण्डिका-शक्ति प्रकट हुईं। जो सैकड़ों गीदड़ियों की भाँति आवाज करने लगी थीं। उन अपराजिता देवी ने धूमिल

जटा वाले महादेव जी से कहा–'भगवन् ! आप शुम्भ-निशुम्भ के पास दूत बनकर जाइए और उन अत्यन्त गर्वीले दानव शुम्भ एवं निशुम्भ दोनों से कहिये। साथ ही उनके अतिरिक्त भी जो दानव युद्ध के लिए वहाँ उपस्थित हों, उनको भी यह संदेश दीजिए। दैत्यों ! यदि तुम जीवित रहना चाहते हो तो पाताल को लौट जाओ। इन्द्र को त्रिलोकी का राज्य मिल जाए और देवता यज्ञभाग का उपभोग करें। यदि बल के अभिमान में आकर तुम युद्ध की अभिलाषा रखते हो, तो आओ। मेरी योगिनियाँ तुम्हारे कच्चे माँस से तृप्त हों।' चूंकि उन देवी ने भगवान् शिव को दूत के कार्य में नियुक्त किया था, इसलिए वह 'शिवदूती' के नाम से संसार में प्रसिद्ध हुईं। वे महादैत्य भी भगवान् शिव के मुँह से देवी के वचन सुनकर क्रोध से भर गए और जहाँ कात्यायनी विराजमान थीं, उस ओर बढ़े। तदनन्तर वे दैत्य अमर्ष में भरकर पहले ही देवी के ऊपर बाण, शक्ति और ऋष्टि अदि अस्त्रों की वर्षा करने लगे। तब देवी ने भी खेल-खेल में ही धनुष की टङ्कार की और उससे छोड़े हुए बड़े-बड़े बाणों द्वारा दैत्यों के चलाये हुए बाण, शूल, शक्ति और फरसों को काट

डाला। फिर काली उनके आगे होकर शत्रुओं को शूल के प्रहार से विदीर्ण करने लगीं और खट्वाङ्ग से उनका कचूमर निकालती हुई रणभूमि में विचरने लगीं। ब्रह्माणी भी जिस-जिस ओर दौड़तीं, उसी-उसी ओर अपने कमण्डलु का जल छिड़ककर शत्रुओं के ओज और पराक्रम को नष्ट कर देती थीं। माहेश्वरी ने त्रिशूल से तथा वैष्णवी ने चक्र से और अत्यन्त क्रोध से भरी हुई कुमार कार्तिकेय की शक्ति से दैत्यों का संहार आरम्भ किया। इन्द्र शक्ति के वज्र प्रहार से विदीर्ण हो सैकड़ों दैत्य-दानव रक्त की धारा बहाते हुए पृथ्वी पर सो गए। वाराही शक्ति ने कितनों को अपने थूथुन की मार से नष्ट किया, दाढ़ों के अग्रभाग से कितनों की छाती छेद डाली तथा कितने ही दैत्य उनके चक्र की चोट से विदीर्ण होकर गिर पड़े। नारसिंही भी दूसरे-दूसरे महादैत्यों को अपने नखों से विदीर्ण करके खाती और सिंहनाद से दिशाओं एवं आकाश को गुँजाती हुई युद्ध क्षेत्र में विचरने लगीं। कितने ही असुर शिवदूती के प्रचण्ड अट्टहास से अत्यन्त भयभीत हो पृथ्वी पर गिर पड़े और गिरने पर उन्हें शिवदूती ने उसी समय अपना ग्रास बना लिया।

इस प्रकार क्रोध में भरे हुए मातृगणों को नाना प्रकार के उपायों से बड़े-बड़े असुरों का मर्दन करते देख दैत्य सैनिक भाग खड़े हुए। मातृगणों से पीड़ित दैत्यों को युद्ध से भागते देख रक्तबीज नामक महादैत्य क्रोध से भरकर युद्ध करने के लिए आया। उसके शरीर से जब रक्त की बूँद पृथ्वी पर गिरती, तब उसी के समान शक्तिशाली एक दूसरा महादैत्य पृथ्वी पर उत्पन्न हो जाता। महाअसुर रक्तबीज हाथ में गदा लेकर इन्द्र शक्ति के साथ युद्ध करने लगा। तब ऐन्द्री ने अपने वज्र से रक्तबीज को मारा। वज्र से घायल होने पर उसके शरीर से बहुत-सा रक्त टपकने लगा। उसके शरीर से रक्त की जितनी बूँदें गिरीं, उतने ही राक्षस उत्पन्न हो गए। वे सब रक्तबीज के समान ही वीर्यवान्, बलवान् तथा पराक्रमी थे। रक्त से उत्पन्न होने वाले वे राक्षस भी अत्यन्त भयंकर अस्त्रों-शस्त्रों का प्रहार करते हुए वहाँ मातृगणों के साथ घोर युद्ध करने लगे। पुनः वज्र के प्रहार से जब रक्तबीज का मस्तक घायल हुआ, तब रक्त बहने लगा और उससे हजारों राक्षस उत्पन्न हो गए। वैष्णवी ने युद्ध में रक्तबीज पर चक्र का प्रहार किया तथा ऐन्द्री ने उस दैत्य सेनापति को गदा से चोट पहुँचायी। वैष्णवी के

चक्र से घायल होने पर उसके शरीर से जो रक्त बहा और उससे जो उसी के बराबर आकार वाले सहस्त्रों महादैत्य प्रकट हुए, उनके द्वारा सम्पूर्ण जगत भर गया। कौमारी ने शक्ति से, वाराही ने खड्ग से और माहेश्वरी ने त्रिशूल से महादैत्य रक्तबीज को घायल किया। क्रोध से भरे हुए उस महादैत्य रक्तबीज ने भी गदा से सभी मातृ-शक्तियों पर अलग-अलग प्रहार किए। शक्ति और शूल आदि से अनेक बार घायल होने पर जो उसके शरीर से रक्त की धारा पृथ्वी पर गिरी, उससे भी निश्चय ही सैकड़ों असुर उत्पन्न हुए। इस प्रकार उस महादैत्य के रक्त से प्रकट हुए असुरों द्वारा सारा संसार व्याप्त हो गया। इससे उन देवताओं को बड़ा भय हुआ। देवताओं को खिन्न देख चण्डिका ने काली से शीघ्रतापूर्वक कहा–'चामुण्डे ! तुम अपना मुँह और भी अधिक फैलाओ तथा मेरे शस्त्राघात से गिरने वाले रक्तबिन्दुओं और उनसे उत्पन्न होने वाले महादैत्यों को तुम अपने इस उतावले मुख से खा जाओ। इस प्रकार रक्त से उत्पन्न होने वाले महादैत्यों का भक्षण करती हुई तुम रण में विचरती रहो। ऐसा करने से उस दैत्य का सारा रक्त क्षीण हो जाने पर वह स्वयं ही नष्ट हो

जाएगा। उन भयंकर दैत्यों को ज़ब तुम खा जाओगी, तब दूसरे नये दैत्य उत्पन्न नहीं हो सकेंगे।'

काली से यह कहकर चण्डिका देवी ने शूल से रक्तबीज पर प्रहार किया। तब काली ने अपने मुख में उसका रक्त ले लिया तो रक्तबीज ने वहाँ चण्डिका पर गदा से प्रहार किया। किन्तु उस गदा प्रहार ने देवी को तनिक भी वेदना नहीं पहुँचायी। तत्पश्चात् रक्तबीज के घायल शरीर से बहुत-सा रक्त गिरा। किन्तु ज्यों ही वह गिरा त्यों ही चामुण्डा ने उसे अपने मुख में ले लिया। रक्त गिरने से काली के मुख में जो महादैत्य प्रसन्न हुए, उन्हें भी वह चट कर गईं और उन्होंने रक्तबीज का रक्त भी पी लिया। तत्पश्चात् देवी ने रक्तबीज को, जिसका रक्त चामुण्डा ने पी लिया था, वज्र, बाण, खड्ग आदि से मार डाला। राजन् ! इस प्रकार शस्त्रों के समुदाय से आहत एवं रक्तहीन हुआ महादैत्य रक्तबीज पृथ्वी पर गिर पड़ा। इससे देवताओं को अनुपम हर्ष की प्राप्ति हुई और मातृगण उन असुरों के रक्तपान से मदमत्त होकर नृत्य करने लगे।

छठा दिन : कात्यायनी

चन्द्रहासोज्ज्वलकरा शार्दूलवरवाहना।
कात्यायनी शुभं दद्याद्देवी दानवघातिनी॥

दुर्गा जी के छठे स्वरूप को कात्यायनी कहते हैं। कात्यायनी महर्षि कात्यायन की कठिन तपस्या से प्रसन्न होकर उनकी इच्छानुसार उनके यहाँ पुत्री के रूप में पैदा हुई थीं। महर्षि कात्यायन ने सर्वप्रथम इनकी पूजा की थी, इसलिए ये कात्यायनी के नाम से प्रसिद्ध हुईं। माँ कात्यायनी अमोघ फलदायिनी हैं। दुर्गा पूजा के छठे दिन इनके स्वरूप की पूजा की जाती है। इस दिन साधक का मन 'आज्ञा चक्र' में स्थित रहता है। योग-साधना में इस आज्ञा चक्र का अत्यन्त ही महत्वपूर्ण स्थान है। इस चक्र में स्थित मन वाला साधक माँ कात्यायनी के चरणों

में अपना सब कुछ न्यौछावर कर देता है। भक्त को सहज भाव से माँ कात्यायनी के दर्शन प्राप्त होते हैं। इनका साधक इस लोक में रहते हुए भी अलौकिक तेज से युक्त हो जाता है।

नौंवा अध्याय

निशुम्भ वध

राजा ने कहा–भगवन् ! आपने रक्तबीज के वध से सम्बन्ध रखने वाला देवी-चरित्र का यह अद्भुत माहात्म्य मुझे बतलाया है। अब रक्तबीज के मारे जाने पर अत्यन्त क्रोध में भरे हुए शुम्भ और निशुम्भ ने जो प्रतिक्रिया की, उसे मैं आपके मुख से सुनना चाहता हूँ।

श्री मार्कण्डेय जी बोले–राजन् ! युद्ध में रक्तबीज तथा अन्य दैत्यों के मारे जाने पर शुम्भ और निशुम्भ के क्रोध की सीमा न रही। अपनी विशाल सेना इस प्रकार मारी जाती देख निशुम्भ अमर्ष में भरकर देवी की ओर दौड़ा। उसके साथ असुरों की प्रधान सेना थी। उसके आगे, पीछे तथा पार्श्वभाग में

बड़े-बड़े असुर थे, जो क्रोध से ओष्ठ चबाते हुए देवी को मार डालने के लिए आगे आए। महापराक्रमी शुम्भ भी अपनी सेना के साथ मातृगणों से युद्ध करके क्रोध में भरा चण्डिका को मारने के लिए आ पहुँचा। तब देवी के साथ शुम्भ और निशुम्भ का घोर संग्राम छिड़ गया। वे दोनों दैत्य मेघों की वर्षा की भाँति बाणों की भयंकर वर्षा कर रहे थे। उन दोनों के चलाये हुए बाणों को चण्डिका ने अपने बाणों के समूह से तुरन्त काट डाला और शस्त्र समूहों की वर्षा करके उन दोनों दैत्यपतियों के अंगों में भी चोट पहुँचायी।

निशुम्भ ने तीखी तलवार और चमकती हुई ढाल लेकर देवी के श्रेष्ठ वाहन सिंह के मस्तक पर आघात किया। अपने वाहन को चोट पहुँचने पर देवी ने क्षुरप्र नामक बाण से निशुम्भ की श्रेष्ठ तलवार तुरन्त ही काट डाली और उसकी ढाल को भी, जिसमें आठ चाँद जड़े थे, उसे खण्ड-खण्ड कर दिया। ढाल और तलवार के कट जाने पर उस असुर ने शक्ति चलायी, किन्तु सामने आने पर देवी ने चक्र से उसके भी दो टुकड़े कर दिए।

अब तो निशुम्भ क्रोध से तिलमिला उठा और उस दानव ने देवी को मारने

के लिए शूल उठाया; किन्तु देवी ने समीप आने पर उसे भी मुक्के से मारकर चूर्ण कर दिया। तब उसने गदा घुमाकर चण्डी के ऊपर चलाई, परन्तु वह भी देवी के त्रिशूल से कटकर भस्म हो गई।

तदनन्तर दैत्यराज निशुम्भ को फरसा हाथ में लेकर आते देखकर देवी ने बाण समूहों से घायल कर उसे धरती पर सुला दिया। अपने महापराक्रमी भाई निशुम्भ के धराशायी हो जाने पर शुम्भ को बड़ा क्रोध हुआ और अम्बिका का वध करने के लिए वह आगे बढ़ा। रथ पर बैठे-बैठे ही उत्तम आयुधों से सुशोभित अपनी बड़ी-बड़ी आठ अनुपम भुजाओं से सारे आकाश को आच्छादित कर वह अतीव शोभा पाने लगा। उसे आते देख देवी ने शंख बजाया और धनुष की प्रत्यञ्चा से भी अति दुस्सह शब्द किया। साथ ही अपने घण्टे के शब्द से, जो समस्त दैत्य-सैनिकों का तेज नष्ट करने वाला था, सम्पूर्ण दिशाओं को गुँजा दिया। तदनन्तर सिंह ने भी अपनी दहाड़ से, जिसे सुनकर बड़े-बड़े गजराजों का महान मद चूर हो जाता है, आकाश, पृथ्वी और दसों दिशाओं को गुँजा दिया।

फिर काली ने आकाश में उछलकर अपने दोनों हाथों से पृथ्वी पर आघात किया। उससे ऐसा भयंकर शब्द हुआ, जिससे पहले के सभी शब्द शान्त हो गए। तत्पश्चात शिवदूती ने दैत्यों के लिए अमंगलजनक अट्टहास किया, इन शब्दों को सुनकर समस्त असुर थर्रा उठे; किन्तु शुम्भ को बड़ा क्रोध हुआ। उस समय देवी ने उस शुम्भ को लक्ष्य करके कहा–'अरे दुरात्मा ! खड़ा रह, खड़ा रह,' तभी आकाश में खड़े हुए देवता बोले उठे–'जय हो, जय हो।' शुम्भ ने वहाँ आकर ज्वालाओं से युक्त अत्यन्त भयानक शक्ति चलाई। अग्निमय पर्वत के समान आती हुई उस शक्ति को देवी ने अपने दिव्य प्रभाव से दूर हटा दिया। उस समय शुम्भ के सिंहनाद से तीनों लोक गूँज उठे। राजन् ! उसकी प्रतिध्वनि से वज्रपात के समान भयानक शब्द हुआ, जिसने अन्य सब शब्दों को घेर लिया। शुम्भ के चलाये हुए बाणों के देवी ने और देवी के चलाये हुए बाणों के शुम्भ ने अपने भयंकर बाणों द्वारा सैकड़ों, हजारों टुकड़े कर दिए।

तब क्रोध में भरी हुई चण्डिका ने शुम्भ को शूल से मारा। उसके प्रहार से

मूर्च्छित हो वह पृथ्वी पर गिर पड़ा। इतने में ही निशुम्भ को चेतना हुई और उसने धनुष हाथ में लेकर बाणों द्वारा काली देवी और सिंह को घायल कर डाला। फिर उस दैत्यराज ने दस हजार भुजायें बनाकर चक्रों के प्रहार से चण्डिका को आच्छादित कर दिया। तब दुर्गम पीड़ा का नाश करने वाली भगवती दुर्गा ने क्रोध से अपने बाणों द्वारा उन चक्रों तथा बाणों को काट गिराया। यह देख निशुम्भ दैत्य सेना के साथ चण्डिका का वध करने के लिए हाथ में गदा लेकर बड़े वेग से दौड़ा। उसके आते ही चण्डी ने तीखी धार वाली तलवार से उसकी गदा को शीघ्र ही काट डाला, तब उसने शूल हाथ में ले लिया। देवताओं को पीड़ा देने वाले निशुम्भ को शूल हाथ में लिए आते देख चण्डिका ने वेग से चलाये हुए अपने शूल से उसकी छाती छेद डाली। शूल से विदीर्ण हो जाने पर उसकी छाती से एक दूसरा महाबली एवं महापराक्रमी राक्षस 'खड़ी रह, खड़ी रह' कहता हुआ प्रगट हुआ। उस प्रगट हुए दैत्य की बात सुनकर देवी ठठाकर हँस पड़ीं और खड्ग से उन्होंने

अपनी दाढ़ों से असुरों की गर्दन कुचलकर खाने लगा, यह बड़ा भयंकर दृश्य था।

उधर काली तथा शिवदूती ने भी अन्यान्य दैत्यों का भक्षण आरम्भ किया। कौमारी की शक्ति से विदीर्ण होकर कितने ही महादैत्य नष्ट हो गए। ब्रह्माणी के मन्त्रपूत जल से निस्तेज होकर कितने ही भाग खड़े हुए। कितने ही दैत्य माहेश्वरी के त्रिशूल से छिन्न-भिन्न होकर धराशायी हो गए। वैष्णवी ने भी अपने चक्र से दानवों को विदीर्ण कर दिया, ऐन्द्री के हाथ से छूटे हुए वज्र से भी कितने ही प्राणों से हाथ धो बैठे। कुछ असुर नष्ट हो गए, कुछ उस महायुद्ध से भाग गए तथा कितने ही काली, शिवदूती तथा सिंह के ग्रास बन गए।

दसवाँ अध्याय

शुम्भ वध

श्री मार्कण्डेय जी बोले—राजन् ! अपने प्राणों के समान प्यारे भाई निशुम्भ

मूर्च्छित हो वह पृथ्वी पर गिर पड़ा। इतने में ही निशुम्भ को चेतना हुई और उसने धनुष हाथ में लेकर बाणों द्वारा काली देवी और सिंह को घायल कर डाला। फिर उस दैत्यराज ने दस हजार भुजायें बनाकर चक्रों के प्रहार से चण्डिका को आच्छादित कर दिया। तब दुर्गम पीड़ा का नाश करने वाली भगवती दुर्गा ने क्रोध से अपने बाणों द्वारा उन चक्रों तथा बाणों को काट गिराया। यह देख निशुम्भ दैत्य सेना के साथ चण्डिका का वध करने के लिए हाथ में गदा लेकर बड़े वेग से दौड़ा। उसके आते ही चण्डी ने तीखी धार वाली तलवार से उसकी गदा को शीघ्र ही काट डाला, तब उसने शूल हाथ में ले लिया। देवताओं को पीड़ा देने वाले निशुम्भ को शूल हाथ में लिए आते देख चण्डिका ने वेग से चलाये हुए अपने शूल से उसकी छाती छेद डाली। शूल से विदीर्ण हो जाने पर उसकी छाती से एक दूसरा महाबली एवं महापराक्रमी राक्षस 'खड़ी रह, खड़ी रह' कहता हुआ प्रगट हुआ। उस प्रगट हुए दैत्य की बात सुनकर देवी ठठाकर हँस पड़ीं और खड्ग से उन्होंने उसका मस्तक काट डाला। फिर तो वह पृथ्वी पर गिर पड़ा। तत्पश्चात् सिंह

को मारा गया देख तथा सारी सेना का संहार हुआ जान शुम्भ ने कुपित होकर कहा–'दुष्ट दुर्गे ! तू बल के अभिमान में आकर झूठ-मूठ का गर्व न कर। तू बड़ी माननीया बनी हुई है, किन्तु दूसरी स्त्रियों के बल का सहारा लेकर लड़ती है।'

देवी बोलीं–'अरे दुष्ट ! मैं अकेली ही हूँ। इस संसार में मेरे अतिरिक्त दूसरा कौन है। देख, ये मेरी ही विभूतियाँ हैं, अतः मुझमें ही प्रवेश कर रही हैं।' तब ब्रह्माणी आदि समस्त देवियाँ अम्बिका देवी के शरीर में लीन हो गईं। उस समय केवल अम्बिका देवी ही रह गईं।

देवी बोलीं–'मैं अपनी ऐश्वर्य शक्ति से अनेक रूपों में यहाँ उपस्थित हुई थी। उन सब रूपों को मैंने समेट लिया। अब मैं अकेली ही युद्ध में खड़ी हूँ। तुम भी स्थिर हो जाओ।'

ऋषि बोले–तब देवी और शुम्भ दोनों में सब देवताओं तथा दानवों के देखते-देखते ही भयंकर युद्ध छिड़ गया। बाणों की वर्षा तथा तीखे शस्त्रों एवं दारुण अस्त्रों के प्रहार के कारण उन दोनों का युद्ध सब लोकों के लिए बड़ा

भयानक प्रतीत हुआ। उस समय अम्बिका देवी ने जो सैकड़ों दिव्य अस्त्र छोड़े, उन्हें दैत्यराज शुम्भ ने उनके निवारक अस्त्रों द्वारा काट डाला।

इसी प्रकार शुम्भ ने भी जो दिव्य अस्त्र चलाये; उन्हें परमेश्वरी ने भयंकर हुंकार शब्द के उच्चारण आदि द्वारा खिलवाड़ में ही नष्ट कर डाला। तब उस असुर ने सैकड़ों बाणों से देवी को आच्छादित कर दिया। यह देख क्रोध में भरी हुई उन देवी ने भी बाण चलाकर उसका धनुष काट डाला। धनुष कट जाने पर दैत्यराज ने शक्ति हाथ में ली, किन्तु देवी ने अपने चक्र से उसके हाथ की शक्ति को भी काट गिराया।

तत्पश्चात् दैत्यों के स्वामी शुम्भ ने सौ चाँद वाली चमकती हुई ढाल और तलवार हाथ में ले उस समय देवी पर हमला किया। उसके आते ही चण्डिका ने अपने धनुष से छोड़े हुए तीखे बाणों द्वारा उसकी सूर्य किरणों के समान उज्ज्वल ढाल और तलवार को तुरंत काट दिया।

फिर उस दैत्य के घोड़े और सारथी मारे गए, धनुष तो पहले ही कट चुका था, अतः अब उसने अम्बिका को मारने के लिए उद्यत होकर मुद्गर हाथ में

लिया। उसे आते देख देवी ने अपने तीक्ष्ण बाणों से उसका मुद्गर भी काट डाला, इस पर भी वह असुर मुक्का तानकर बड़े वेग से देवी की ओर झपटा। उस दैत्यराज ने देवी की छाती में मुक्का मारा, तब उन देवी ने भी उसकी छाती में एक चांटा जड़ दिया। देवी का थप्पड़ खाकर दैत्यराज शुम्भ पृथ्वी पर गिर पड़ा, किन्तु पुनः सहसा पूर्ववत् उठकर खड़ा हो गया। फिर वह उछला और देवी को ऊपर ले जाकर आकाश में खड़ा हो गया, तब चण्डिका आकाश में भी बिना किसी आधार के ही शुम्भ के साथ युद्ध करने लगीं। उनका वह युद्ध पहले सिद्ध और मुनियों को विस्मय में डालने वाला था।

फिर अम्बिका ने शुम्भ के साथ बहुत देर तक युद्ध करने के पश्चात् उसे उठाकर घुमाया और पृथ्वी पर पटक दिया। पटके जाने पर पृथ्वी पर आने के बाद वह दुष्टात्मा दैत्य पुनः चण्डिका का वध करने के लिए उनकी ओर बड़े वेग से दौड़ा।

तब समस्त दैत्यों के राजा शुम्भ को अपनी ओर आते देख देवी ने त्रिशूल से उसकी छाती छेदकर उसे पृथ्वी पर गिरा दिया। देवी के त्रिशूल की धार से

घायल होने पर उसके प्राण-पखेरू उड़ गए और वह समुद्रों, द्वीपों तथा पर्वतों सहित समूची पृथ्वी को कंपाता हुआ भूमि पर गिर पड़ा।

उस दुरात्मा के मारे जाने पर सम्पूर्ण जगत प्रसन्न एवं स्वस्थ हो गया तथा आकाश स्वच्छ दिखाई देने लगा। पहले जो उत्पातसूचक मेघ और उल्कापात होते थे, वे सब शान्त हो गए और उस दैत्य के मारे जाने पर नदियाँ भी ठीक मार्ग से बहने लगीं।

उस समय शुम्भ की मृत्यु के बाद सम्पूर्ण देवताओं का हृदय हर्षातिरेक से भर गया और गन्धर्वगण मधुरिम गीत गाने लगे। दूसरे गन्धर्व बाजे बजाने लगे और अप्सराएँ नृत्य करने लगीं। पवित्र वायु बहने लगी। सूर्य की प्रभा उत्तम हो गयी। अग्निशाला की बुझी हुई आग अपने आप प्रज्ज्वलित हो उठी तथा सम्पूर्ण दिशाओं के भयंकर शब्द शान्त हो गए।

७

सातवाँ दिन : कालरात्रि

एक वेणी जपाकर्णपूरा नग्ना खरास्थिता।
लम्बोष्ठी कर्णिकाकर्णी तैलाभ्यक्तशरीरिणी॥
वामपादोल्लसल्लोहलताकण्टक भूषणा।
वर्धनमूर्धध्वजा कृष्णा कालरात्रिर्भयङ्करी॥

श्री दुर्गा जी के सातवें स्वरूप को कालरात्रि कहा जाता है। माँ कालरात्रि का स्वरूप देखने में अत्यन्त भयानक है, लेकिन ये सदैव शुभ फल देने वाली मानी जाती हैं। इसीलिए इन्हें शुभङ्करी भी कहा जाता है। दुर्गा पूजा के सप्तम दिन माँ कालरात्रि की पूजा का विधान है। इस दिन साधक का मन 'सहस्रार' चक्र में स्थित रहता है। उसके लिए ब्रह्माण्ड की समस्त सिद्धियों के द्वार खुलने लगते हैं। इस चक्र में स्थित साधक का मन पूर्णतः माँ

कालरात्रि के स्वरूप में अवस्थित रहता है। माँ कालरात्रि दुष्टों का विनाश और ग्रह बाधाओं को दूर करने वाली हैं, जिससे साधक भयमुक्त हो जाता है।

ग्यारहवाँ अध्याय

देवी-देवताओं द्वारा देवी की स्तुति एवं देवी द्वारा देवताओं को वरदान

श्री मार्कण्डेय जी बोले–देवी के द्वारा वहाँ महादैत्यपति शुम्भ के मारे जाने पर इन्द्र आदि देवता अग्नि को आगे करके उन कात्यायनी देवी की स्तुति करने लगे। उस समय अभीष्ट की प्राप्ति होने से उनके मुखकमल दमक उठे थे और उनके प्रकाश सभी से दिशाएँ भी जगमगा उठी थीं।

देवता बोले–शरणागत की पीड़ा दूर करने वाली देवी ! हम पर प्रसन्न होओ। सम्पूर्ण जगत की माता ! प्रसन्न होओ। विश्वेश्वरी ! विश्व की रक्षा करो।

देवी ! तुम्हीं चराचर जगत की अधीश्वरी हो। तुम इस जगत का एकमात्र आधार हो; क्योंकि पृथ्वी रूप में तुम्हारी ही स्थिति है।

देवी ! तुम्हारा पराक्रम अतुलनीय है। तुम्हीं जलरूप में स्थित होकर सम्पूर्ण जगत को तृप्त करती हो। तुम अनन्त बल सम्पन्न वैष्णवी शक्ति हो। इस विश्व की कारणभूता परामाया हो। देवी ! तुमने इस समस्त जगत को मोहित कर रखा है। तुम्हीं प्रसन्न होने पर इस पृथ्वी पर मोक्ष की प्राप्ति कराती हो। देवी ! सम्पूर्ण विद्याएँ तुम्हारे ही भिन्न-भिन्न स्वरूप हैं। जगत में जितनी स्त्रियाँ हैं, वे सब तुम्हारी ही मूर्तियाँ हैं। जगदम्बे ! एकमात्र तुमने ही इस विश्व को व्याप्त कर रखा है। तुम्हारी स्तुति क्या हो सकती है ? तुम तो स्तवन करने योग्य पदार्थों से परे एवं परावाणी हो। जब तुम सर्वस्वरूपा देवी स्वर्ग तथा मोक्ष प्रदान करने वाली हो, तब इसी रूप में तुम्हारी स्तुति हो गई। तुम्हारी स्तुति के लिए इससे अच्छी स्तुतियाँ और क्या हो सकती हैं ? बुद्धि रूप से सब लोगों के हृदय में विराजमान रहने वाली तथा स्वर्ग एवं मोक्ष प्रदान करने वाली नारायणी देवी ! तुम्हें नमस्कार है। कला, काष्ठा आदि के रूप से

अवस्था परिवर्तन की ओर ले जाने वाली तथा विश्व का उपसंहार करने में समर्थ नारायणी ! तुम्हें नमस्कार है। नारायणी ! तुम सब प्रकार का मंगल प्रदान करने वाली मंगलमयी हो। कल्याणदायिनी शिवा हो। सब पुरुषार्थों को सिद्ध करने वाली, शरणागतवत्सला, तीन नेत्रों वाली एवं गौरी हो, तुम्हें नमस्कार है। तुम सृष्टि पालन और संहार की शक्तिभूता, सनातनी देवी, गुणों का आधार तथा सर्वगुण सम्पन्न हो। नारायणी ! तुम्हें नमस्कार है। शरण में आए हुए दीनों एवं पीड़ितों की रक्षा में संलग्न रहने वाली तथा सबकी पीड़ा दूर करने वाली नारायणी देवी ! तुम्हें नमस्कार है। नारायणी ! तुम ब्रह्माणी का रूप धारण करके हंसों से जुते हुए विमान पर बैठती तथा कुश-मिश्रित जल छिड़कती रहती हो। तुम्हें नमस्कार है। माहेश्वरी रूप से त्रिशूल, चन्द्रमा एवं सर्प को धारण करने वाली तथा महान वृषभ की पीठ पर बैठने वाली नारायणी देवी ! तुम्हें नमस्कार है। मोरों और मुर्गों से घिरे रहने वाली तथा महाशक्ति धारण करने वाली कौमारी रूप धारिणी निष्पाप नारायणी ! तुम्हें नमस्कार है। शंख, चक्र, गदा और शार्गधनुषरूप उत्तम आयुधों को धारण

करने वाली वैष्णवी शक्तिरूपा नारायणी ! तुम प्रसन्न होओ। तुम्हें नमस्कार है। हाथ में भयानक महाचक्र लिए और दाढ़ों पर धरती को उठाये वाराही रूपधारिणी कल्याणमयी नारायणी ! तुम्हें नमस्कार है। भयंकर नृसिंह रूप से दैत्यों के वध के लिए उद्योग करने वाली तथा त्रिभुवन की रक्षा में संलग्न रहने वाली नारायणी ! तुम्हें नमस्कार है। मस्तक पर किरीट और हाथ में महावज्र धारण करने वाली, सहस्त्र नेत्रों के कारण उद्दीप्त दिखायी देने वाली और वृत्रासुर के प्राणों का अपहरण करने वाली इन्द्र की शक्तिरूपा नारायणी देवी ! तुम्हें नमस्कर है। शिवदूती रूप से दैत्यों की महान सेना का संहार करने वाली, भयंकर रूप धारण कर तथा विकट गर्जना करने वाली नारायणी ! तुम्हें नमस्कार है। दाढ़ों के कारण विकराल मुखवाली, मुण्डमाला से विभूषित मुण्डमर्दिनी चामुण्डारूपा नारायणी ! तुम्हें नमस्कार है। लक्ष्मी, लज्जा, महाविद्या, श्रद्धा, पुष्टि, स्वधा, ध्रुवा, महारात्रि तथा महाअविद्यारूपी नारायणी ! तुम्हें नमस्कार है।

मेधा, सरस्वती, वरा (श्रेष्ठा), भूति (ऐश्वर्यरूपा), बाभ्रवी (भूरे रंग की

अथवा पार्वती), तामसी (महाकाली), नियता (संयमपरायण) तथा ईशा (सबकी अधीश्वरी) रूपिणी नारायणी ! तुम्हें नमस्कार है। सर्वस्वरूपा सर्वेश्वरी तथा सब प्रकार की शक्तियों से सम्पन्न दिव्यरूपा दुर्गे देवी ! सब भयों से हमारी रक्षा करो; तुम्हें नमस्कार है। कात्यायनी ! यह तीन लोचनों से विभूषित तुम्हारा सौम्य मुख सब प्रकार के भयों से हमारी रक्षा करे। तुम्हें नमस्कार है। भद्रकाली ! ज्वालाओं के कारण विकराल प्रतीत होने वाला, अत्यन्त भयंकर और समस्त असुरों का संहार करने वाला तुम्हारा त्रिशूल भय से हमें बचाये। तुम्हें नमस्कार है। देवी ! जो अपनी ध्वनि से सम्पूर्ण जगत को व्याप्त करके दैत्यों का तेज नष्ट किए देता है, वह तुम्हारा घण्टा हम लोगों की पापों से उसी प्रकार रक्षा करे, जैसे माता अपने पुत्रों की बुरे कर्मों से रक्षा करती है। चण्डिके ! तुम्हारे हाथों में सुशोभित खड्ग, जो असुरों के रक्त और चर्बी से सना हुआ है, वह हमारा मंगल करे। हम तुम्हें नमस्कार करते हैं। देवी ! तुम प्रसन्न होने पर सब रोगों को नष्ट कर देती हो और कुपित होने पर मनोवाञ्छित सभी कामनाओं का नाश कर देती हो। जो

कुपित होने पर मनोवाञ्छित सभी कामनाओं का नाश कर देती हो। जो

लोग तुम्हारी शरण में आ चुके हैं, उन पर विपत्ति तो आती ही नहीं। तुम्हारी शरण में आए हुए मनुष्य दूसरों को भी शरण देने वाले हो जाते हैं।

देवी अम्बिके ! तुमने अपने स्वरूप को अनेक भागों में विभक्त करके नाना प्रकार के रूपों से जो इस समय इन धर्मद्रोही दैत्यों का संहार किया है, वह सब दूसरी कौन कर सकती थी ? विद्याओं में, ज्ञान को प्रकाशित करने वाले शास्त्रों में तथा आदिवाक्यों (वेदों) में तुम्हारे अलावा और किसका वर्णन है ? तथा तुमको छोड़कर कौन दूसरी ऐसी है, जो इस विश्व को अज्ञानमय घोर अन्धकार से परिपूर्ण ममतारूपी गड्ढे में निरन्तर भटका रही हो। जहाँ राक्षस, जहाँ भयंकर विष वाले सर्प, जहाँ शत्रु, जहाँ लुटेरों की सेना और जहाँ दावानल हो, वहाँ तथा समुद्र के बीच में भी साथ रहकर तुम विश्व की रक्षा करती हो।

विश्वेश्वरी ! तुम विश्व का पालन करती हो। विश्वरूपा हो, इसलिए सम्पूर्ण विश्व को धारण करती हो। तुम भगवान् विश्वनाथ की भी वन्दनीया हो। जो

लोग भक्तिपूर्वक तुम्हारे सामने मस्तक झुकाते हैं, वे सम्पूर्ण विश्व को आश्रय देने वाले होते हैं।

देवी ! प्रसन्न होओ। जैसे इस समय असुरों का वध करके तुमने शीघ्र ही हमारी रक्षा की है, उसी प्रकार सदा हमें शत्रुओं के भय से बचाओ। सम्पूर्ण जगत का पाप नष्ट कर दो और उत्पात एवं पापों के फलस्वरूप प्राप्त होने वाली महामारी आदि बड़े-बड़े उपद्रवों को शीघ्र दूर करो। विश्व की पीड़ा दूर करने वाली देवी ! हम तुम्हारे चरणों में पड़े हुए हैं, हम पर प्रसन्न होओ। त्रिलोकनिवासियों की पूजनीया परमेश्वरी ! सब लोगों को वरदान दो।

देवी बोलीं–देवताओं ! मैं वर देने को तैयार हूँ। तुम्हारे मन में जिस वर की इच्छा हो, वह माँग लो। संसार के लिए उपकारक वर को मैं अवश्य दूँगी। देवता बोले–सर्वेश्वरी ! तुम इसी प्रकार तीनों लोकों की समस्त बाधाओं को शान्त करो और हमारे शत्रुओं का नाश करती रहो।

देवी बोली–देवताओं ! वैवस्वत मन्वन्तर के अट्ठाइसवें युग में शुम्भ और निशुम्भ नाम के दो अन्य महादैत्य उत्पन्न होंगे। तब मैं नन्दगोप के घर में उनकी

निशुम्भ नाम के दो अन्य महादैत्य उत्पन्न होंगे। तब मैं नन्दगोप के घर में उनकी

पत्नी यशोदा के गर्भ से अवतीर्ण हो विन्ध्याचल में जाकर रहूँगी और उक्त दोनों असुरों का नाश करूँगी। फिर अत्यन्त भयंकर रूप से पृथ्वी पर अवतार लेकर मैं वैप्रचित नाम वाले दानवों का वध करूँगी। उन भयंकर महादैत्यों का भक्षण करते समय मेरे दाँत अनार के फूल की भाँति लाल हो जाएंगे। तब स्वर्ग में देवता और मृत्युलोक में मनुष्य सदा मेरी स्तुति करते हुए मुझे 'रक्तदन्तिका' कहेंगे। फिर जब पृथ्वी पर सौ वर्षों के लिए वर्षा रुक जाएगी और पानी का अभाव हो जाएगा, उस समय मुनियों के स्तवन करने पर मैं पृथ्वी पर आयोनिजा रूप में प्रकट होऊँगी और सौ नेत्रों से मुनियों की ओर देखूँगी। अतः मनुष्य 'शताक्षी' इस नाम से मेरा गायन करेंगे।

देवताओं ! उस समय मैं अपने शरीर से उत्पन्न हुए शाकों द्वारा समस्त संसार का भरण-पोषण करूँगी। जब तक वर्षा नहीं होगी, तब तक वे शाक ही सबके प्राणों की रक्षा करेंगे। ऐसा करने के कारण पृथ्वी पर 'शाकम्भरी' के नाम से मेरी ख्याति होगी। उसी अवतार में मैं दुर्गम नामक महादैत्य का वध भी करूँगी। इससे मेरा नाम 'दुर्ग्र देवी' के रूप में प्रसिद्ध होगा। फिर जब मैं

भीमरूप धारण करके मुनियों की रक्षा के लिए हिमालय पर रहने वाले राक्षसों का भक्षण करूँगी, उस समय सब मुनि भक्ति से नतमस्तक होकर मेरी स्तुति करेंगे। तब मेरा नाम 'भीमा देवी' के रूप में विख्यात होगा। जब अरुण नामक दैत्य तीनों लोकों में भारी उपद्रव मचायेगा। तब मैं तीनों लोकों का हित करने के लिए छः पैरों वाले असंख्य भ्रमरों का रूप धारण करके उस महदैत्य का वध करूँगी। उस समय सब लोग 'भ्रामरी' के नाम से मेरी स्तुति करेंगे। इस प्रकार जब-जब संसार में दानवों के द्वारा बाधा उपस्थित होगी, तब-तब अवतार लेकर मैं शत्रुओं का नाश करूँगी।

बारहवाँ अध्याय

देवी चरित्रों के पाठ का माहात्म्य

देवी बोलीं—देवताओं ! जो एकाग्रचित्त होकर प्रतिदिन इन स्तुतियों से मेरा स्तवन करेगा, उसकी सारी बाधाएँ मैं निश्चय ही दूर कर दूँगी। जो मधु कैटभ

स्तवन करेगा, उसकी सारी बाधाएँ मैं निश्चय ही दूर कर दूँगी। जो मधु कैटभ

का नाश, महिषासुर का वध तथा शुम्भ-निशुम्भ के संहार के प्रसंग का पाठ करेंगे तथा अष्टमी, चतुर्दशी और नवमी को भी जो एकाग्रचित्त हो भक्तिपूर्वक मेरे उत्तम माहात्म्य का श्रवण करेंगे। उन्हें कोई पाप नहीं छू सकेगा। उन पर पापजनित आपत्तियाँ भी नहीं आएंगी। उनके घर में कभी दरिद्रता नहीं होगी तथा उनको कभी प्रेमीजनों के विछोह का कष्ट भी नहीं भोगना पड़ेगा। इतना ही नहीं, उन्हें शत्रु से, लुटेरों से, राजा से, शस्त्र से, अग्नि से तथा जल की राशि से भी कभी भय नहीं होगा। इसलिए सबको एकाग्रचित्त होकर भक्तिपूर्वक मेरे इस माहात्म्य को सदा पढ़ना और सुनना चाहिए। यह परम कल्याणकारक है। मेरा माहात्म्य महामारीजनित समस्त उपद्रवों तथा आदि भौतिक आदि तीनों प्रकार के उत्पातों को शान्त करने वाला है। मेरे जिस मन्दिर में प्रतिदिन विधिपूर्वक मेरे इस माहात्म्य का पाठ किया जाता है, उस स्थान को मैं कभी नहीं छोड़ती। वहाँ सदा ही मेरा निवास बना रहता है। बलिदान, पूजा, होम तथा महोत्सव के अवसरों पर मेरे इस चरित्र का पूरा-पूरा पाठ और श्रवण करना चाहिए। ऐसा करने पर मनुष्य विधि को जानकर या बिना जाने भी मेरे

लिए जो बलि, पूजा या होम आदि करेगा, उसे मैं बड़ी प्रसन्नता के साथ ग्रहण करूँगी।

शरद्काल में जो वार्षिक महापूजा की जाती है, उस अवसर पर मेरे इस माहात्म्य को जो भक्तिपूर्वक सुनेगा, वह मनुष्य मेरे प्रसाद से सब बाधाओं से मुक्त तथा धन, धान्य एवं पुत्र से सम्पन्न होगा--इसमें तनिक भी संदेह नहीं है।

मेरे इस माहात्म्य, मेरे प्रादुर्भाव की सुन्दर कथाएँ तथा युद्ध में किए हुए मेरे पराक्रम को सुनने से मनुष्य निर्भय हो जाता है। मेरे माहात्म्य को श्रवण करने वाले मनुष्यों के शत्रु नष्ट हो जाते हैं, उन्हें कल्याण की प्राप्ति होती है तथा उनका कुल आनन्दित रहता है। सर्वत्र शान्तिकर्म में, बुरे स्वप्न दिखाई देने पर तथा ग्रहजनित भयंकर पीड़ा उपस्थित होने पर मेरा माहात्म्य श्रवण करना चाहिए। इससे सब विघ्न तथा भयंकर ग्रह-पीड़ाएँ शान्त हो जाती हैं और मनुष्यों द्वारा देखा हुआ दुःस्वप्न शुभ स्वप्न में परिवर्तित हो जाता है। बालग्रहों से आक्रान्त हुए बालकों के लिए यह माहात्म्य शान्तिकारक है तथा मनुष्यों के संगठन में

फूट होने पर यह अच्छी प्रकार मित्रता कराने वाला होता है। यह माहात्म्य समस्त दुराचारियों के कुल का नाश कराने वाला है। इसके पाठ मात्र से राक्षसों, भूतों और पिशाचों का नाश हो जाता है।

मेरा यह सब माहात्म्य मेरी सन्निधि की प्राप्ति कराने वाला है। पशु, पुष्प, अर्घ्य, धूप, दीप, गन्ध आदि उत्तम सामग्रियों द्वारा पूजन करने से, ब्राह्मणों को भोजन कराने से, होम करने से, प्रतिदिन अभिषेक करने से, नाना प्रकार के अन्य भोगों का अर्पण करने से तथा दान देने आदि से वर्षभर तक जो मेरी आराधना की जाती है और उससे मुझे जितनी प्रसन्नता होती है, उतनी प्रसन्नता मेरे इस उत्तम चरित्र का एक बार श्रवण करने मात्र से हो जाती है। यह माहात्म्य श्रवण कीर्तन करने पर पापों को हर लेता है और आरोग्य प्रदान करता है। मेरे प्रादुर्भाव का कीर्तन समस्त भूतों से रक्षा करता है तथा मेरा युद्ध विषयक चरित्र दुष्ट दैत्यों का संहार करने वाला है। इसके श्रवण करने पर मनुष्यों को शत्रु का भय नहीं रहता। देवताओं ! तुमने और महर्षियों ने जो मेरे स्तवन किए हैं तथा ब्रह्माजी ने जो स्तुतियाँ की हैं, वे सभी कल्याणदायक

बुद्धि प्रदान करती हैं। वन में, सूने मार्ग में अथवा दावानल में घिर जाने पर, निर्जन स्थानों में लुटेरों के चंगुल में पड़ जाने पर या शत्रुओं द्वारा पकड़े जाने पर अथवा जंगल में सिंह, व्याघ्र या जंगली हाथियों के पीछा करने पर, कुपित राजा के आदेश से वध या बन्धन के स्थान में ले जाए जाने पर अथवा महासागर में नाव पर बैठने के बाद भारी तूफान से नाव के डगमग होने पर और अत्यन्त भयंकर युद्ध में शस्त्रों का प्रहार होने पर अथवा वेदना से पीड़ित होने पर, सभी भयानक बाधाओं के उपस्थित होने पर जो मेरे इस चरित्र का स्मरण करता है, वह मनुष्य संकटों से मुक्त हो जाता है। मेरे प्रभाव से सिंह आदि हिंसक जन्तु नष्ट हो जाते हैं तथा लुटेरे और शत्रु भी मेरे चरित्र का स्मरण करने वाले व्यक्ति से दूर भागते हैं।

ऋषि बोले—इतना कहकर प्रचण्ड पराक्रम वाली भगवती चण्डिका सब देवताओं के देखते-देखते वहीं अन्तर्धान हो गईं। फिर समस्त देवता भी शत्रुओं के मारे जाने से निर्भय होकर पहले की भाँति यज्ञभाग का उपभोग करते हुए अपने-अपने अधिकार का पालन करने लगे।

[illegible] भाग से निर्भय होकर पहले की भाँति यज्ञभाग का उपभोग करते हुए अपने-अपने अधिकार का पालन करने लगे।

संसार का विध्वंस करने वाले महा भयंकर अतुल पराक्रमी देवशत्रु शुम्भ तथा महाबली निशुम्भ के युद्ध में देवी द्वारा मारे जाने पर शेष दैत्य पाताललोक में चले गए। राजन् ! इस प्रकार भगवती अम्बिका देवी नित्य होती हुई भी पुनः प्रकट होकर जगत की रक्षा करती हैं। वे ही इस विश्व को मोहित करती हैं, वे ही जगत को जन्म देती हैं तथा वे ही प्रार्थना करने पर संतुष्ट होकर विज्ञान एवं समृद्धि प्रदान करती हैं। राजन् ! महाप्रलय के समय महामारी का स्वरूप धारण करने वाली वे महाकाली ही इस समस्त ब्रह्माण्ड में व्याप्त हैं। वे ही समय-समय पर महामारी के रूप में प्रकट होती हैं और वे ही स्वयं अजन्मा होती हुई भी सृष्टि के रूप में प्रकट होती हैं। वे सनातनी देवी ही समयानुसार सम्पूर्ण भूतों की रक्षा करती हैं। मनुष्यों के अभ्युदय के समय वे ही घर में लक्ष्मी के रूप में स्थित हो करके उन्नति प्रदान करती हैं और वे ही अभाव के समय दरिद्रता बनकर विनाश का कारण होती हैं। पुष्प, धूप और गन्ध आदि से पूजन करके उनकी स्तुति करने पर वे धन, पुत्र धार्मिक बुद्धि तथा उत्तम गति प्रदान करती हैं।

८

आठवाँ दिन : महागौरी

श्वेत वृषे समारूढा श्वेताम्बरधरा शुचिः।
महागौरी शुभं दद्यान्महादेवप्रमोददा॥

श्री दुर्गा जी के आठवें स्वरूप का नाम महागौरी है। दुर्गा पूजा के आठवें दिन महागौरी की उपासना का विधान है। इनकी शक्ति अमोघ और सद्यः फलदायिनी है। इनकी उपासना से साधक के सभी कलुष धुल जाते हैं।

तेरहवाँ अध्याय

राजा सुरथ और वैश्य को देवी का वरदान

श्री मार्कण्डेय जी बोले–राजन् ! इस प्रकार मैंने तुमसे देवी के उत्तम माहात्म्य का वर्णन किया। जो इस जगत को धारण करती हैं, उन देवी का ऐसा ही प्रभाव है। वे ही विद्या (ज्ञान) उत्पन्न करती हैं। भगवान् विष्णु की मायास्वरूप उन भगवती के द्वारा ही तुम, ये वैश्य तथा अन्यान्य विवेकीजन मोहित होते हैं, मोहित हुए हैं तथा आगे भी मोहित होंगे। महाराज ! तुम उन्हीं परमेश्वरी की शरण में जाओ। आराधना करने पर वे ही मनुष्यों को भोग, स्वर्ग तथा मोक्ष प्रदान करती हैं। श्री मार्कण्डेय जी बोले–क्रौष्टिकि जी ! मेधा मुनि के ये वचन सुनकर राजा सुरथ ने उत्तम व्रत का पालन करने वाले उन महाभाग महर्षि को प्रणाम किया।

वे अत्यन्त ममता के कारण और राजच्युत होने से बहुत खिन्न हो चुके थे।

महामुने ! इसलिए विरक्त होकर वे राजा तथा वैश्य तत्काल तपस्या को चले गए और वे जगदम्बा के दर्शन के लिए नदी के तट पर रहकर तपस्या करने लगे। राजा तथा वैश्य उत्तम देवी सूक्त का जप करते हुए तपस्या में प्रवृत्त हुए। वे दोनों नदी के तट पर देवी की मिट्टी की मूर्ति बनाकर पुष्प, धूप और हवन आदि के द्वारा उनकी आराधना करने लगे। उन्होंने पहले तो आहार को धीरे-धीरे कम किया; फिर बिल्कुल निराहार रहकर देवी में ही मन लगाकर एकाग्रतापूर्वक उनका चिन्तन आरम्भ किया। वे दोनों अपने शरीर के रक्त से बलि देते हुए तीन वर्ष तक लगातार संयमपूर्वक देवी की आराधना करते रहे। इस पर प्रसन्न होकर जगत को धारण करने वाली चण्डिका देवी ने प्रत्यक्ष दर्शन देकर कहा।

देवी बोलीं—राजन् ! तथा अपने कुल को आनन्दित करने वाले वैश्य ! तुम लोग जिस वस्तु की अभिलाषा रखते हो, वह मुझसे माँगो। मैं संतुष्ट हूँ, अतः तुम्हें वह सब कुछ दूँगी। श्री मार्कण्डेय जी बोले—तब राजा ने दूसरे जन्म में नष्ट न होने वाला राज्य माँगा तथा इस जन्म में भी शत्रुओं की सेना को बलपूर्वक नष्ट करके पुनः अपना राज्य प्राप्त कर लेने का वरदान माँगा। वैश्य

बलपूर्वक नष्ट करके पुनः अपना राज्य प्राप्त कर लेने का वरदान माँगा। वैश्य

का चित्त संसार की ओर से खिन्न एवं विरक्त हो चुका था; अतः उन्होंने अहंतारूपी आसक्ति का नाश करने वाला ज्ञान माँगा।

देवी बोलीं–राजन् ! तुम थोड़े ही दिनों में शत्रुओं को मारकर अपना राज्य प्राप्त कर लोगे। अब वहाँ तुम्हारा राज्य स्थिर रहेगा। फिर मृत्यु के पश्चात तुम भगवान विवस्वान् (सूर्य) के अंश से जन्म लेकर इस पृथ्वी पर सावर्णिक मनु के नाम से विख्यात होओगे। हे वैश्य ! तुमने भी जिस वर को मुझसे प्राप्त करने की इच्छा की है, उसे देती हूँ। तुम्हें मोक्ष के लिए ज्ञान प्राप्त होगा। श्री मार्कण्डेय जी बोले–इस प्रकार उन दोनों को मनोनुकूल वरदान देकर तथा उनके द्वारा भक्तिपूर्वक अपनी स्तुति सुनकर देवी अम्बिका तत्काल अन्तर्धान हो गईं। इस तरह देवी से वरदान पाकर क्षत्रियों में श्रेष्ठ सुरथ सूर्य से जन्म लेकर सावर्णि नामक मनु होंगे।

देवी सूक्त

देवी भगवती बोलीं–मैं सच्चिदानन्दमयी सर्वात्मा देवी रुद्र, वसु, आदित्य

तथा विश्वे देवगणों के रूप में विचरती हूँ। मैं ही मित्र और वरुण दोनों को, इन्द्र और अग्नि को तथा दोनों अश्विनी कुमारों को धारण करती हूँ। मैं ही शत्रुओं के नाशक आकाशचारी देवता सोम को, त्वष्टा प्रजापति को तथा पूषा और भग को भी धारण करती हूँ।

जो हविष्य से सम्पन्न होकर देवताओं को उत्तम हविष्य की प्राप्ति कराता है तथा उन्हें सोमरस के द्वारा तृप्त करता है, उस यजमान के लिए मैं ही उत्तम यज्ञ का फल और धन प्रदान करती हूँ। मैं सम्पूर्ण जगत की अधीश्वरी, अपने उपासकों को धन की प्राप्ति कराने वाली, साक्षात्कार करने योग्य परब्रह्म को अपने से अभिन्न रूप में जानने वाली तथा पूजनीय देवताओं में प्रधान हूँ। मैं प्रपञ्चरूप से अनेक भावों में स्थित हूँ। सम्पूर्ण भूतों में मेरा प्रवेश है। अनेक स्थानों में रहने वाले देवता जहाँ-कहीं जो कुछ भी करते हैं, वह सब मेरे लिए करते हैं। जो अन्न खाता है, वह मेरी शक्ति से ही खाता है [क्योंकि मैं ही भोक्ता शक्ति हूँ]; इसी प्रकार जो देखता है, जो साँस लेता है तथा जो कही हुई बात सुनता है, वह मेरी ही सहायता से उक्त सब कर्म करने में समर्थ होता है।

सुनता है, वह मेरी ही सहायता से उक्त सब कर्म करने में समर्थ होता है।

जो मुझे इस रूप में नहीं जानते, वे न जानने के कारण ही दीन दशा को प्राप्त हो जाते हैं। हे बहुश्रुत ! मैं तुम्हें श्रद्धा से प्राप्त होने वाले ब्रह्मतत्व का उपदेश करती हूँ, सुनो–मैं स्वयं ही देवताओं और मनुष्यों द्वारा सेवित इस दुर्लभ तत्त्व का वर्णन करती हूँ। मैं जिस-जिस मनुष्य की रक्षा करती हूँ, उस-उसको सबकी अपेक्षा अधिक शक्तिशाली बना देती हूँ। उसी को सृष्टिकर्ता ब्रह्मा, परोक्ष ज्ञान-सम्पन्न ऋषि तथा उत्तम मेधा शक्ति से युक्त बनाती हूँ। मैं ही ब्रह्मद्वेषी हिंसक असुरों का वध करने के लिए रुद्र के धनुष को चढ़ाती हूँ। मैं ही शरणागतजनों की रक्षा करने के लिए शत्रुओं से युद्ध [illegible] तथा अन्तर्यामी रूप से पृथ्वी और आकाश में व्याप्त रहती हूँ। मैं ही [illegible] के पिता रूप आकाश को सर्वाधिष्ठान स्वरूप परमात्मा के ऊपर उत्पन्न करती हूँ। समुद्र में तथा जल में मेरे कारण की स्थिति है; अतएव मैं समस्त भुवन में व्याप्त रहती हूँ तथा उस स्वर्गलोक का भी अपने शरीर से स्पर्श करती हूँ।

मैं कारणरूप से जब समस्त विश्व की रचना आरम्भ करती हूँ, तब दूसरों की प्रेरणा के बिना स्वयं ही वायु की भाँति चलती हूँ, स्वेच्छा से ही कर्म में

प्रवृत्त होती हूँ। मैं पृथ्वी और आकाश दोनों से परे हूँ। अपनी महिमा से ही मैं ऐसी हुई हूँ।

अपराध क्षमापन स्तोत्र

माँ ! मैं न मन्त्र जानता हूँ, न यन्त्र; अहो ! मुझे स्तुति का भी ज्ञान नहीं है। न आवाहन का पता है, न ध्यान का। स्तोत्र और कथा की भी जानकारी नहीं है। न तो तुम्हारी मुद्रायें जानता हूँ, और न व्याकुल होकर मुझे विलाप करना आता है। मैं केवल तुम्हारा अनुसरण--तुम्हारे पीछे चलना जानता हूँ, जो सब क्लेशों को और समस्त दुःख-विपत्तियों को हर लेने वाला है। सबका उद्धार करने वाली कल्याणमयी माता ! मैं तुम्हारी पूजा की विधि नहीं जानता, मेरे पास धन का भी अभाव है, मैं स्वभाव से भी आलसी हूँ तथा मुझसे पूजा का यथाविधि सम्पादन हो भी नहीं सकता; इन सब कारणों से तुम्हारे चरणों की सेवा में जो त्रुटि हो गई है, उसे क्षमा करना; क्योंकि कुपुत्र का होना सम्भव है, किन्तु माता कहीं भी कुमाता नहीं होती।

है, किन्तु माता कहीं भी कुमाता नहीं होती।

माँ ! इस पृथ्वी पर तुम्हारे सीधे-सादे पुत्र तो बहुत-से हैं, किन्तु उन सबमें मैं ही तुम्हारा अत्यन्त चपल बालक हूँ; मेरे जैसा चंचल कोई विरला ही होगा। शिवे ! मेरा जो यह त्याग हुआ है, यह तुम्हारे लिए कदापि उचित नहीं है; क्योंकि संसार में कुपुत्र का होना संभव है, किन्तु माता कुमाता नहीं होती।

हे जगदम्बे ! हे माता ! मैंने तुम्हारे चरणों की सेवा कभी नहीं की, देवी ! तुम्हें अधिक धन भी समर्पित नहीं किया; तथापि मुझ जैसे अधम पर जो तुम अपार स्नेह करती हो, इसका कारण यही है कि संसार में कुपुत्र पैदा हो सकता है, परन्तु माता कुमाता नहीं होती। गणेश जी को जन्म देने वाली माता पार्वती ! मुझे नाना प्रकार की सेवाओं में व्यस्त रहना पड़ता है, इसलिए पिच्यासी वर्ष से अधिक अवस्था बीत जाने पर मैंने देवताओं को छोड़ दिया है, अब उनकी सेवा तथा पूजन मुझसे नहीं हो पाता; अतएव उनसे कुछ भी सहायता मिलने की आशा नहीं है। इस समय यदि तुम्हारी कृपा नहीं होगी तो मैं अवलम्बरहित होकर किसकी शरण में जाऊँगा।

हे माता अपर्णा ! तुम्हारे मन्त्र का एक अक्षर भी कान में पड़ जाए तो उसका फल यह होता है कि मूर्ख चाण्डाल भी मधुपाक के समान मधुर वाणी का उच्चारण करने वाला उत्तम वक्ता हो जाता है, दीन मनुष्य भी करोड़ों स्वर्ण-मुद्राओं से सम्पन्न हो चिरकाल तक निर्भय रहा करता है। जब मन्त्र के एक अक्षर के श्रवण का ऐसा फल है तो जो लोग विधिपूर्वक जप में लगे रहते हैं, उनके जप से प्राप्त होने वाला उत्तम फल कैसा होगा ? इसको कौन मनुष्य जान सकता है। हे भवानी ! जो अपने अंगों में चिता की राख-भभूत लपेटे रहते हैं, जिनका विष ही भोजन है, जो दिगम्बर (नग्न रहने वाले) हैं, मस्तक पर जटा और कण्ठ में नागराज वासुकि को हार के रूप में धारण करते हैं तथा जिनके हाथ में कपाल शोभा पाता है, ऐसे भूतनाथ पशुपति भी जो एकमात्र 'जगदीश' की पदवी धारण करते हैं, इसका क्या कारण है ? यह महत्व उन्हें कैसे मिला; यह केवल तुम्हारे पाणिग्रहण की परिपाटी का फल है; तुम्हारे साथ विवाह होने से ही उनका महत्व बढ़ गया।

मुख पर चन्द्रमा की शोभा धारण करने वाली माँ ! मुझे मोक्ष की इच्छा

मुख पर चन्द्रमा की शोभा धारण करने वाली माँ ! मुझे मोक्ष की इच्छा

नहीं है, संसार के वैभव की भी अभिलाषा नहीं है; न विज्ञान की अपेक्षा है, न सुख की आकांक्षा; अतः तुमसे मेरी यही प्रार्थना है कि मेरा जन्म 'मृडानी, रुद्राणी, शिव, भवानी'–इन नामों का जप करते हुए बीते। माँ श्यामा ! नाना प्रकार की पूजन सामग्रियों से कभी विधिपूर्वक तुम्हारी आराधना मुझसे न हो सकी। सदा कठोर-भाव का चिन्तन करने वाली मेरी वाणी ने कौन-सा अपराध नहीं किया ! फिर भी तुम स्वयं ही प्रयत्न करके मुझ अनाथ पर जो किञ्चित् कृपादृष्टि रखती हो, माँ ! यह तुम्हारे ही अनुसार है। तुम्हारे-जैसी दयामय माता ही मेरे-जैसे कुपुत्र को भी आश्रय दे सकती है। माता दुर्गे ! करुणासिन्धु महेश्वरी ! मैं विपत्तियों में फँसकर आज जो तुम्हारा स्मरण करता हूँ [पहले कभी नहीं करता रहा] इसे मेरी शठता न मान लेना; क्योंकि भूख-प्यास से पीड़ित बालक माता का ही स्मरण करते हैं। जगदम्बे ! मुझ पर जो तुम्हारी पूर्ण कृपा बनी हुई है, इसमें आश्चर्य की कौन-सी बात है, पुत्र अपराध-पर-अपराध क्यों न करता जाता हो, फिर भी माता उसकी उपेक्षा नहीं करती। महादेवी ! मेरे समान कोई पापी नहीं है और तुम्हारे समान दूसरी

कोई पापहारिणी नहीं है; ऐसा जानकर जो उचित जान पड़े, वह करो।

सिद्धकुंजिका स्तोत्र

शिवजी बोले–देवी! सुनो। अब मैं उत्तम कुञ्जिका स्तोत्र का उपदेश करूँगा, जिस मन्त्र के प्रभाव से देवी का पाठ सफल होता है। कवच, अर्गला, कीलक, रहस्य, सूक्त, ध्यान, न्यास और यहाँ तक कि अर्चन भी आवश्यक नहीं है। केवल कुञ्जिका के पाठ से दुर्गा-पाठ का फल प्राप्त हो जाता है। यह कुञ्जिका अत्यन्त गुप्त और देवों के लिए भी दुर्लभ है। हे पार्वती ! इसे स्वयोनि की भाँति प्रयत्नपूर्वक गुप्त रखना चाहिए। यह उत्तम कुञ्जिका स्तोत्र केवल पाठ के द्वारा मारण, मोहन, वशीकरण, स्तम्भन और उच्चाटन आदि आभिचारिक उद्देश्यों को सिद्ध करता है।

मन्त्र–ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे। ॐ ग्लौं हूं क्लीं जूं सः ज्वालय ज्वालय ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ज्वल हं सं लं क्षं फट् स्वाहा॥

हे रुद्रस्वरूपिणी ! तुम्हें नमस्कार है। हे मधु दैत्य को मारने वाली ! तुम्हें नमस्कार है। कैटभ विनाशिनी को नमस्कार है। महिषासुर को मारने वाली देवी ! तुम्हें नमस्कार। शुम्भ का हनन करने वाली और निशुम्भ को मारने वाली ! तुम्हें नमस्कार है।

हे महादेवी ! मेरे जप को जाग्रत और सिद्ध करो। 'ऐंकार' के रूप में सृष्टि स्वरूपिणी, 'ह्रीं' रूप में सृष्टि का पालन करने वाली, 'क्लीं' के रूप में कामरूपिणी तथा (अखिल ब्रह्माण्ड) की बीजरूपिणी देवी ! तुम्हें नमस्कार है। चामुण्डा के रूप में चण्डविनाशनी और 'यैकार' के रूप में तुम वर देने वाली हो। 'विच्चे' रूप में तुम नित्य ही अभय देती हो। (इस प्रकार ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे) तुम इस मन्त्र का सम्पूर्ण स्वरूप हो। 'धां धी धूं' के रूप में धूर्जटी (शिव) की तुम पत्नी हो। 'वां वीं वूं' के रूप में तुम वाणी की अधीश्वरी हो। 'क्रां क्रीं क्रीं क्रूं' के रूप में कालिका देवी, 'शां शीं शूं' के रूप में तुम मेरा कल्याण करो। 'हुं हुं हुंकार' स्वरूपिणी, 'जं जं जं' जम्भनाशिनी, 'भ्रां भ्रीं भ्रूं' के रूप में हे कल्याणकारिणी भैरवी भवानी !

तुम्हें बारम्बार प्रणाम है। 'अं कं चं टं तं पं यं शं वीं दुं ऐं वीं हं क्षं धिजाग्रं धिजाग्रं' इन सबको तोड़ो और दीप्त करो स्वाहा। 'पां पीं पूं' के रूप में तुम पार्वती पूर्णा हो। 'खां खीं खूं' के रूप में तुम खेचरी (आकाशचारिणी) अथवा खेचरी मुद्रा हो। 'सां सीं सूं' स्वरूपिणी सप्तशती देवी के मन्त्र को मेरे लिए सिद्ध करो। यह कुञ्जिका स्तोत्र मन्त्र को जाग्रत करने के लिए है।

इसे भक्तिहीन व्यक्ति को नहीं देना चाहिए। हे पार्वती ! इसे गुप्त रखो। हे देवी ! जो बिना कुञ्जिका के सप्तशती का पाठ करता है, उसे उसी प्रकार सिद्धि नहीं मिलती, जिस प्रकार वन में रोना निरर्थक होता है।

नवरात्रों में कन्या पूजन

हे दुर्गा देवी के भक्तों ! देवी की प्रसन्नता के लिए नवरात्रों में अष्टमी अथवा नवमी के दिन कुमारी कन्याओं को जिमाने का विधान है। इन कन्याओं की संख्या ९ हो तो अति उत्तम है, नहीं तो दो कन्याओं से भी अभिप्राय पूरा

हो सकता है। कन्याओं की आयु २ वर्ष से ऊपर तथा १० वर्ष से अधिक नहीं होनी चाहिए। दो वर्ष की कन्या कुमारी, तीन वर्ष की कन्या त्रिमूर्ति, चार वर्ष की कन्या कल्याणी, पाँच वर्ष की कन्या रोहिणी, छः वर्ष की कन्या कालिका, सात वर्ष की चण्डिका, आठ वर्ष की कन्या शाम्भवी, नौ वर्ष की कन्या दुर्गा तथा दस वर्ष की कन्या सुभद्रा मानी जाती है। इनको नमस्कार करने के मन्त्र निम्नलिखित हैं–

१. कौमाटयैं नमः २. त्रिमूर्त्यैं नमः ३. कल्याण्यै नमः
४. रोहिण्यै नमः ५. कालिकायै नमः ६. चण्डिकायै नमः
७. शाम्भव्यै नमः ८. दुर्गायै नमः ९. सुभद्राये नमः।

कुमारी कन्याओं में हीनांगी, अधिकांगी या कुरूपा नहीं होनी चाहिए।

भोजन कराने के बाद उन कन्याओं को दक्षिणा देनी चाहिए। इस प्रकार महामाया भगवती प्रसन्नता से हमारे मनोरथ पूर्ण करती हैं।

नौवां दिन : सिद्धिदात्री

सिद्धगन्धर्वयक्षाद्यैरसुरैरमरैरपि ।
सेव्यमाना सदा भूयात सिद्धिदा सिद्धिदायिनी।।

श्री दुर्गा जी की नौवीं शक्ति को सिद्धिदात्री कहते हैं। जैसा नाम से प्रकट है, ये सभी प्रकार की सिद्धियों को प्रदान करने वाली हैं। नव-दुर्गाओं में माँ सिद्धिदात्री अन्तिम हैं। इनकी उपासना के बाद भक्तों की सभी मनोकामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं।

देवी के लिए बनाए नैवेद्य की थाली में भोग का सामान रखकर निम्न रूप से प्रार्थना करनी चाहिए।

करनी चाहिए।

माँ का भोग

भोगो हे भोगो मैया, भोगो हे भोगो, तेरी मेरी अबला माय मेरा मन यूँ ही पतियायो।
बथुए की भाजी देवा अथक बनाई, खीर खांड देवा और मिठीयाई,
सन्त प्यारों का दाना, बाले भोलों का दाना, निपट गरीबों का दाना।
माता ले घर आए तै तेरा मन यूँ ही पतियायो॥१॥
ऐ माँ दास वशिष्ठ तेरा भोग ले आया,
मुरारी भगत ! तेरा भोग ले आया, राज रूपेश्वर ! तेरा भोग ले आया।
धानु रे भक्त तेरा भोग ले आया, राजा रे हरिश्चन्द्र तेरा भोग ले आया।
रानी तारा रे तेरा भोग ले आई, सन्त और सेवक तेरा भोग ले आए।
भक्त सवैया तेरा भोग ले आए, भोगो हे भोगो मैया भोगो हे॥२॥
सोने का गड़वा गंगाजल पानी, सोने की थारी गंगाजल पानी।
ऐसा ठंडरा-ठंडरा पानी, ऐसा मिठरा-मिठरा पानी।
पियो-पियो मेरी आदिभवानी, नगरकोट रानी।

आशा देवी, मनसा देवी, अष्ट भुजी छत्र भुजी।
तै मेरी कालका महारानी पियो हे पियो मैया।
पानों का बीड़ा तेरा भोला जन लाया, पान सुपारी तेरा धानु जन लाया।
चाबो हे चाबो मैया, चाबो हे चाबो चण्डी, मेर मन यूं ही पतियायो।

भोग समर्पण के पश्चात दुर्गा चालीसा, विन्ध्येश्वरी चालीसा, विन्ध्येश्वरी स्तोत्र का पाइ करके श्री दुर्गाजी की आरती करके नवरात्रों को हाथ जोड़कर विदा किया जाता है। देवी जागरण में तारा रानी की कथा कहने का विधान है। ऐसा माना जाता है कि देवी जागरण के पश्चात यदि तारा रानी की कथा न कही जाय तो वह जागरण सफल नहीं होता है तो जो साधक पाठ समाप्त कर तारा रानी की कथा कहना जाएं, उनके लिए तारा रानी की कथा को भी पुस्तक में दिया गया है। व्रत रखने वाले नर-नारी इस प्रकार से पूजा समाप्त करके भोजन करें और सामान्य व्यवहार प्रारम्भ करें।

श्री दुर्गा चालीसा

नमो नमो दुर्गे सुख करनी। नमो नमो अम्बे दुख हरनी॥
निरंकार है ज्योति तुम्हारी। तिहूँ लोक फैली उजियारी॥
शशिललाट मुख महा विशाला। नेत्र लाल भृकुटि विकराला॥
रूप मातु को अधिक सुहावै। दरश करत जन अतिसुख पावै॥
तुम संसार शक्ति लै कीना। पालन हेतु अन्न धन दीना॥
अन्नपूरना हुई जगपाला। तुम ही आदि सुन्दरी बाला॥
प्रलय काल सब नाशनहारी। तुम गौरी शिवशंकर प्यारी॥
शिव योगी तुम्हरे गुण गावें। ब्रह्मा विष्णु तुम्हें नित ध्यावें॥
रूप सरस्वती को तुम धारा। दे सुबुद्धि ऋषि मुनिन उबारा॥
धरयौ रूप नृसिंह को अम्बा। परगट भई फाड़ि के खम्बा॥

रक्षा कर प्रह्लाद बचायो। हिरणाकुश को स्वर्ग पठायो॥
लक्ष्मी रूप धरो जग माहीं। श्री नारायण अंग समाहीं॥
क्षीरसिन्धु में करत विलासा। दयासिन्धु दीजै मन आशा॥
हिंगलाज में तुम्हीं भवानी। महिमा तब नहिं जाय बखानी॥
मातंगी धूमावति माता। भुवनेश्वरि बगला सुखदाता॥
श्री भैरव तारा जगतारिणी। छिन्नभाल भव दुःख निवारिणी॥
केहरि वाहन सोह भवानी। लाँगुर वीर चलत अगवानी॥
कर में खप्पर खंग विराजे। जाको देख काल डर भाजे॥
सोहै अस्त्र और तिरशूला। जाते उठत शत्रु हिय शूला॥
नगरकोट में तुम्हीं विराजत। तिहूँ लोक में डंका बाजत॥
शुम्भ निशुम्भ दानव तुम मारे। रक्तबीज शंखन संहारे॥
महिषासुर दैत्य अभिमानी। जेहि अघभार मही अकुलानी॥

रूप कराल कालि को धारा। सेन सहित तुम तेहि संहारा॥
परी गाढ़ सन्तन पर जब जब। भईं सहाय मातु तुम तब तब॥
अमरपुरी अरु बासव लोका। तव महिमा सब कहैं अशोका॥
ज्वालामय है ज्योति तुम्हारी। तुम्हें सदा पूजें नर नारी॥
प्रेम भक्ति से जो जस गावें। दुःखदारिद्र निकट नहिं आवें॥
ध्यावें तुम्हें जो नर मन लाई। जन्म मरण ते सो छुटि जाई॥
जोगी सुन मुनि कहत पुकारी। योग न होय बिन शक्ति तुम्हारी॥
शंकर अचारज तप कीन्हो। काम क्रोध जीत सब लीन्हो॥
निशिदिन ध्यान धरो शंकर को। कहु काल नहिं सुमिरो तुमको॥
शक्ति रूप को मरम न पायो। गई शक्ति तब मन पछितायो॥
शरणागति हुई कीर्ति बखानी। जय जय जय जगदम्ब भवानी॥
भई प्रसन्न आदि जगदम्बा। दई शक्ति नहिं कीन्ह विलम्बा॥

मोको मातु कष्ट अति घेरो। तुम बिन कौन हरै दुख मेरो॥
आशा तृष्णा निपट सतावै। रिपु मूरख मोहि अति डरपावै॥
शत्रु नाश कीजै महारानी। सुमिरों इक चित्त तुम्हें भवानी॥
करौ कृपा हे मातु दयाला। ऋषि सिद्धि दै करहु निहाला॥
जब लगि जिऊं सदा फल पाऊँ। तुम्हारो जस मैं सदा सुनाऊँ॥
दुर्गा चालीसा जो गावै। सब सुख भोग परमपद पावै॥
"देवीदास" शरण निज जानी। करहु कृपा जगदम्ब भवानी॥

॥ दोहा ॥

शरणागत रक्षा करे, भक्त रहे निःशंक।
मैं आया तेरी शरण में, मातु लीजिए अंक॥

॥ इतिश्री दुर्गा चालीसा ॥

श्री विन्ध्येश्वरी चालीसा

॥ दोहा ॥

नमो नमो विन्ध्येश्वरी, नमो नमो जगदम्ब।
सन्तजनों के काज में करती नहीं बिलम्ब॥

जय जय जय विन्ध्याचल रानी। आदि शक्ति जग विदित भवानी॥
सिंह वाहिनी जय जग माता। जय जय जय त्रिभुवन सुखदाता॥
कष्ट निवारिनि जय जग देवी। जय जय सन्त असुर सुरसेवी॥
महिमा अमित अपार तुम्हारी। शेष सहस मुख वर्णत हारी॥
दीनन के दुःख हरत भवानी। नहिं देख्यो तुम सम कोउ दानी॥
सब कर मनसा पुरवत माता। महिमा अमित जगत विख्याता॥

जो जन ध्यान तुम्हारो लावै। सो तुरतहिं वांछित फल पावै॥
तू ही वैष्णवी तू ही रुद्राणी। तू ही शारदा अरु ब्रह्माणी॥
रमा राधिका श्यामा काली। तू ही मातु सन्तन प्रतिपाली॥
उमा माधवी चण्डी ज्वाला। वेगि मोहि पर होहु दयाला॥
तू ही हिंगलाज महारानी। तू ही शीतला अरु विज्ञानी॥
दुर्गा दुर्ग विनाशिनी माता। तू ही लक्ष्मी जग सुखदाता॥
तू ही जाह्नवी अरु इन्द्राणी। हेमावति अम्बे निर्वाणी॥
अष्टभुजी वाराहिनि देवी। करत विष्णु शिव जाकर सेवी॥
चौसट्ठी देवी कल्याणी। गौरी मंगला सब गुणखानी॥
पाटन मुम्बा दन्त कुमारी। भद्रकालि सुनु विनय हमारी॥
वज्रधारिणी शोक विनाशिनी। आयु रक्षिणी विन्ध्यवासिनी॥
जया और विजया बैताली। मातु संकटी अरु विकराली॥

नाम अनन्त तुम्हार भवानी। बरणै किमि मानुष अज्ञानी ॥
जा पर कृपा मातु तब होई। तो वह करै चहै मन जोई ॥
कृपा करहु मो पर महारानी। सिद्धि करिय अम्बे मम बानी ॥
जो नर धरै मातु कर ध्याना। ताकर सदा होय कल्याना ॥
विपति ताहि सपनेहु नहिं आवै। जो देवी का जाप करावै ॥
जो नर कर्ज ऋण होय अपारा। सो नर पाठ करै शत बारा ॥
निश्चय ऋण मोचन होइ जाई। जो नर पाठ करै मन लाई ॥
अस्तुति जो नर पढ़े पढ़ावै। या जग में सो अति सुख पावै ॥
जाको व्याधि सतावै भाई। जाप करत सब दूर पराई ॥
जो नर अति बन्दी महं होई। बार हजार पाठ कर सोई ॥
निश्चय बन्दी ते छुटि जाई। सत्य वचन मम मानहु भाई ॥
जा पर जो कछु संकट होई। निश्चय देविहिं सुमिरै सोई ॥

जा कहं पुत्र होय नहिं भाई। सो नर या विधि करे उपाई ॥
पांच वर्ष सो पाठ करावै। नौरातन में विप्र जिमावै ॥
निश्चय होहिं प्रसन्न भवानी। पुत्र देहि ताकहं गुणखानी ॥
ध्वजा नारियल आनि चढ़ावै। विधि समेत पूजन करवावै ॥
नित प्रति पाठ करै मन लाई। प्रेम सहित नहिं आन उपाई ॥
यह श्री विन्ध्याचल चालीसा। रंक पढ़त होवे अवनीसा ॥
यह जनि अचरज मानहुं भाई। कृपा दृष्टि जापर होइ जाई ॥
जय जय जय जगदम्ब भवानी। कृपा करहु मोहिं पर जन जानी ॥
विन्ध्वासिनी मातु अखण्डे। तु ही ब्रह्माण्ड शक्ति जित खण्डे ॥
यह चालीसा जो नित गावै। तुरतहि मनवांछित फल पावै ॥

॥ इतिश्री विन्ध्येश्वरी चालीसा ॥

श्री विन्ध्येश्वरी स्तोत्र

निशुंभ शुम्भ गर्जनी प्रचण्ड मुण्ड खण्डनी । बने रणे प्रकाशिनीं भजामि विन्ध्यवासिनीं ॥१॥

त्रिशूल मुण्ड धारिणीं धरा विघात हारिणीं । गृहे गृहे निवासिनीं भजामि विन्ध्यवासिनीं ॥२॥

दरिद्र दुःख हारिणीं सुता विभूति कारिणीं । वियोग शोक हारिणीं भजामि विन्ध्यवासिनीं ॥३॥

लसत्सुलाल लोचं लतासं वरं प्रदं । कपाल शूधारिणीं भजामि विन्ध्यवासिनीं ॥४॥

करौ मुदा गदाधरा शिवा शिवः प्रदायिनीं । बरा बरातना शुभा भजामि विन्ध्यवासिनीं ॥५॥

अधीन्द्र जामिनी प्रदं त्रिवास्य रूप धारिणीं । जले थले निवासिनीं भजामि विन्ध्यवासिनीं ॥६॥

विशिष्ट शिष्ट कारिणीं विशाल रूप धारिणीं । महोदरे विलासिनीं भजामि विन्ध्यवासिनीं ॥७॥

पुरंदरादि सेवितां सुरारि वंश खण्डितां । विशुद्ध बुद्धि कारिणीं भजामि विन्ध्यवासिनीं ॥८॥

दुर्गाजी के १०८ नाम

१. सती, २. साध्वी, ३. भवप्रीता, ४. भवानी, ५. भवमोचनी, ६. आर्या, ७. दुर्गा, ८. जया, ९. आद्या, १०. त्रिनेत्रा, ११. शूलधारिणी, १२. पिनाकधारिणी, १३. चित्रा, १४. चन्द्रघंटा, १५. महातपा, १६. मनः, १७. बुद्धि, १८. अहंकारा, १९. चित्तरूपा, २०. चिता, २१. चिति, २२. सर्वत्रमयी, २३. सत्ता, २४. सत्यानन्दस्वरूपिणी, २५. अनन्ता, २६.भाविनी, २७. भाव्या, २८. भव्या, २९. अभव्या, ३०. सदागति, ३१.शाम्भवी, ३२. देवमाता, ३३. चिन्ता, ३४. रत्नप्रिया, ३५. सर्वविद्या, ३६. दक्षकन्या, ३७. दक्षयज्ञ विनाशिनी, ३८. अपर्णा, ३९. अनेकवर्णा, ४०. पाटला, ४१. पाटलावती, ४२. पट्टाम्बरपरीधाना, ४३. कलमर्जाररंजिनी, ४४. अमेयविक्रमा, ४५. क्रूरा, ४६. सुन्दरी, ४७. सुरसुन्दरी, ४८. वनदुर्गा, ४९. मातंगी, ५०. मतंगमुनिपूजिता, ५१. ब्राह्मी, ५२. माहेश्वरी, ५३. ऐन्द्री, ५४. कौमारी, ५५. वैष्णवी, ५६. चामुण्डा, ५७. वाराही, ५८. लक्ष्मी, ५९. पुरुषाकृति, ६०. विमला, ६१. उत्कर्षिणी, ६२. ज्ञाना, ६३. क्रिया, ६४. नित्या, ६५. बुद्धिदा, ६६. बहुला, ६७. बहुलप्रेमा, ६८. सर्ववाहन-वाहना, ६९. शुम्भ-निशुम्भहनी, ७०. महिषासुर-मर्दिनी, ७१. मधु-कैटभहन्त्री, ७२. चण्ड-मुण्ड-विनाशिनी, ७३. सर्वासुरविनाशा, ७४. सर्वदानविघातिनी, ७५. सर्वशास्त्रमयी, ७६. सत्या, ७७. सर्वास्त्रधारिणी, ७८. अनेकशस्त्रहस्ता, ७९. अनेकशस्त्रधारिणी, ८०. कुमारी, ८१. एककन्या, ८२. कैशोरी, ८३. युवती, ८४. यति, ८५. अप्रौढ़ा, ८६. प्रौढ़ा, ८७. वृद्धमाता, ८८. बलप्रदा, ८९. महोदरी, ९०. मुक्तकेशी, ९१. घोररूपा, ९२. महाबला, ९३. अग्निज्वाला, ९४. रौद्रमुखी, ९५. कालरात्रि, ९६. तपस्विनी, ९७. नारायणी, ९८. भद्रकाली, ९९. विष्णुमाया, १००. जलोदरी, १०१. शिवदूती, १०२. कराली, १०३. अनन्ता, १०४. परमेश्वरी, १०५.कात्यायनी, १०६. सावित्री, १०७. प्रत्यक्षा, १०८. ब्रह्मवादिनी।

तारा रानी की कथा

माता के जगराते में महारानी तारा देवी की कथा कहने-सुनने की परम्परा प्राचीन काल से चली आई है। बिना इस कथा के जागरण को सम्पूर्ण नहीं माना जाता है। माता के प्रत्येक जागरण में इसको सम्मिलित करने का परम्परागत विधान है। इस कलयुग में इस शक्ति की पूजा से ही भक्तों के मन की मनोकामनाएं पूर्ण होती हैं और मन को शांति मिलती है। कथा इस प्रकार है–

महाराजा दक्ष की दो पुत्रियां तारा देवी एवं रुकमण भगवती दुर्गाजी की भक्ति में अटूट विश्वास रखती थीं। दोनों बहनें नियमपूर्वक एकादशी का व्रत किया करती थीं तथा माता के जागरण में प्रेम के साथ कीर्तन एवं माहात्म्य कहा सुना करती थीं।

एकादशी के दिन एक बार भूल से छोटी बहन रुकमण ने माँसाहार कर लिया। जब तारा देवी को पता लगा तो उसे रुकमण पर बड़ा क्रोध आया और बोली–"तू है तो मेरी बहन, परन्तु मनुष्य देह पाकर भी तूने नीच योनि के प्राणी जैसा कर्म किया, तू तो छिपकली बनने योग्य है।" बड़ी बहन के मुख से निकले शब्दों को रुकमण ने शिरोधार्य कर लिया और साथ ही प्रायश्चित्त का उपाय पूछा।

तारा ने कहा–"त्याग और परोपकार से सब पाप छूट जाते हैं।"

दूसरे जन्म में तारा देवी इन्द्रलोक की अप्सरा बनी और छोटी बहन रुकमण छिपकली योनि में प्रायश्चित का अवसर ढूँढने लगी।

द्वापर युग में जब पाण्डवों ने अश्वमेध यज्ञ किया तब उन्होंने दूत भेजकर दुर्वासा ऋषि सहित तैंतीस करोड़ देवताओं को निमन्त्रण दिया। जब दूत दुर्वासा ऋषि के स्थान पर निमन्त्रण लेकर गया तो दुर्वासा ऋषि बोले–"यदि तैंतीस करोड़ देवता उस यज्ञ में भाग लेंगे तो मैं उसमें सम्मिलित नहीं हो सकता।" दूत तैंतीस करोड़ देवताओं को निमन्त्रण देकर वापिस पहुँचा और दुर्वासा ऋषि का वृत्तान्त पाण्डवों को कह सुनाया कि वह सब देवताओं को बुलाने के कारण नहीं आवेंगे।

यज्ञ आरम्भ हुआ। तैंतीस करोड़ देवता यज्ञ में भाग लेने आए। उन्होंने दुर्वासा ऋषि जी को न देखकर पाण्डवों से पूछा कि ऋषि को क्यों नहीं बुलवाया। इस पर पाण्डवों ने नम्रता सहित उत्तर दिया कि निमन्त्रण भेजा था, परन्तु वह अहंकार के कारण नहीं आए। यज्ञ में पूजन, हवन आदि निर्विघ्न समाप्त हुए। भोजन के लिए भण्डारे की तैयारी होने लगी।

दुर्वासा ऋषि ने देखा कि पाण्डवों ने उनकी उपेक्षा कर दी है तो उन्होंने क्रोध करके पक्षी का रूप धारण किया, चोंच में सर्प लेकर भण्डारे में फेंक दिया। इसका किसी को कुछ भी पता नहीं चला। वह सर्प खीर की कढ़ाई में गिरकर छिप गया। एक छिपकली

कुछ भी पता नहीं चला। वह सर्प खीर की कढ़ाई में गिरकर छिप गया। एक छिपकली

(जो पिछले जन्म में तारा देवी की छोटी बहन थी तथा बहन के शब्दों को शिरोधार्य कर इस जन्म में छिपकली बनी) सर्प का भण्डारे में गिरना देख रही थी। उसे त्याग व परोपकार की शिक्षा अब तक याद थी। वह छिपकली घर की दीवार पर चिपकी समय की प्रतीक्षा करती रही। कई लोगों के प्राण बचाने हेतु उसने अपने प्राण न्यौछावर कर देने का मन-ही-मन निश्चय किया। जब खीर भण्डारे में दी जाने वाली थी तो सबकी आँखों के सामने वह छिपकली दीवार से कूदकर उस कढ़ाई में जा गिरी।

इस प्रकार लोग छिपकली को बुरा भला कहते हुए खीर की कढ़ाई को खाली करने लगे, तो उन्होंने उसमें मरे हुए सर्प को देखा। अब सबको मालूम हुआ कि छिपकली ने अपने प्राण देकर उन सबके प्राणों की रक्षा की है। इस प्रकार उपस्थित सभी सज्जनों और देवताओं ने उस छिपकली के लिए प्रार्थना की कि उसे योनियों में उत्तम मनुष्य योनि प्राप्त हो तथा अन्त में मोक्ष को प्राप्त करे। तीसरे जन्म में छिपकली राजा स्पर्श के घर कन्या बनी। दूसरी बहन तारा देवी ने फिर मनुष्य जन्म लेकर तारामती नाम से अयोध्या के प्रतापी राजा हरिश्चन्द्र के साथ विवाह किया।

राजा स्पर्श ने ज्योतिषियों से कन्या की कुण्डली बनवाई। ज्योतिषियों ने राजा को बताया कि कन्या राजा के लिए हानिकारक सिद्ध होगी, शकुन ठीक नहीं है अतः आप इसे मरवा दीजिए। राजा बोला—लड़की को मारना बहुत बड़ा पाप है। मैं उस पाप का भागी

नहीं बन सकता। तब ज्योतिषियों ने विचार करके राय दी–"हे राजन् ! आप एक लकड़ी के सन्दूक में ऊपर से सोना-चाँदी आदि जड़वा दें। फिर उस सन्दूक के भीतर लड़की को बन्द करके नदी में प्रवाहित करा दीजिए।"

सोना-चाँदी जड़ित लकड़ी का सन्दूक अवश्य ही कोई लालच से निकाल लेगा और आपकी कन्या को भी पाल लेगा। आपको किसी प्रकार का पाप न लगेगा। ऐसा ही किया गया और नदी में बहता हुआ सन्दूक काशी के समीप एक हरिजन को दिखाई दिया। वह सन्दूक को नदी से बाहर निकाल लाया। जब खोला–तो उसमें सोने-चांदी के अतिरिक्त रूपवान कन्या दिखाई दी।

उस हरिजन के कोई सन्तान नहीं थी। जब उसने अपनी पत्नी को वह कन्या दी तो उसकी खुशी का ठिकाना न रहा। उसने अपनी सन्तान के समान ही बच्ची को छाती से लगा लिया। भगवती की कृपा से उसके स्तनों में दूध उतर आया। पति-पत्नी ने प्रेम से कन्या का नाम 'रुक्को' रख दिया। जब वह कन्या विवाह योग्य हुई तो हरिजन ने उसका विवाह अयोध्या के सजातीय युवक के साथ बड़ी धूमधाम के साथ किया। इस प्रकार पहले जन्म की रुकमण, दूसरे जन्म की छिपकली तथा तीसरे जन्म में रुक्को बन गई। रुक्को की सास महाराज हरिश्चन्द्र के घर सफाई आदि करने जाया करती थी। एक दिन वह बीमार पड़ गई। निदान रुक्को महाराज हरिश्चन्द्र के घर काम करने के लिए पहुँच गई। महाराज

की पत्नी तारामती ने रुक्को से कहा–"हे बहन ! तुम यहाँ मेरे निकट आकर बैठो।" महारानी की बात सुनकर रुक्को बोली–"रानी जी, मैं नीच जाति की भीलनी हूँ, भला मैं आपके साथ कैसे बैठ सकती हूँ।"

तब तारामती ने कहा–"बहन ! पूर्व जन्म में तुम मेरी सगी बहन थीं। एकादशी का व्रत खण्डित करने के कारण तुम्हें छिपकली की योनि में जाना पड़ा। जो होना था सो हो चुका। अब तुम अपने इस जन्म को सुधारने का उपाय करो तथा भगवती वैष्णो माता की सेवा करके अपना जन्म सफल बनाओ।" यह सुनकर रुक्को को बड़ी प्रसन्नता हुई और उसने उसका उपाय पूछा। रानी ने बताया कि, "वैष्णो माता सब मनोरथों को पूरा करने वाली हैं। जो लोग श्रद्धापूर्वक माता का पूजन व जागरण करते हैं, उनकी सब मनोकामनाएँ पूर्ण होती हैं।"

रुक्को खुश होकर माता की मनोती करते हुए बोली–"हे माता ! यदि आपकी कृपा से मुझे एक पुत्र प्राप्त हो जाए तो मैं भी आपका पूजन व जागरण करवाऊंगी।" प्रार्थना को माता ने स्वीकार कर लिया। फलस्वरूप दसवें महीने उसके गर्भ से एक अत्यन्त सुंदर बालक ने जन्म लिया, परन्तु दुर्भाग्यवश रुक्को को माता का पूजन व जागरण कराने का ध्यान ही न रहा। परिणाम यह हुआ कि जब वह बालक पाँच वर्ष का हुआ तो उसे एक दिन बुखार आ गया और तीसरे दिन उसे चेचक (माता) निकल आई। रुक्को दुःखी

होकर अपने पूर्व जन्म की बहन तारामती के पास गई और बच्चे की बीमारी का समूचा वृत्तान्त कह सुनाया।

तब तारामती ने कहा–"तू जरा ध्यान करके देख कि तुझसे माता के पूजन में कोई भूल तो नहीं हुई।" इस पर रुक्को को छः वर्ष पहले की बात का ध्यान आ गई और उसने अपना अपराध स्वीकार किया और कहा कि बच्चे को आराम आने पर अवश्य जागरण करवाऊंगी।

भगवती की कृपा से बच्चा दूसरे दिन ही ठीक हो गया। तब रुक्को ने देवी के मन्दिर में जाकर पण्डित से कहा कि मुझे अपने घर माता का जागरण कराना है, सो आप मंगलवार को मेरे घर पधारकर कृतार्थ करें। पण्डित जी बोले–"अरी रुक्को ! तू यहीं पाँच रुपये दे जा। हम तेरे नाम से यहीं मन्दिर में जागरण करवा देंगे। तू नीच जाति की स्त्री है, इसलिए हम तेरे घर चलकर देवी का जागरण नहीं कर सकते।" रुक्को ने कहा–"हे पण्डित जी ! माता के दरबार में तो ऊंच-नीच का कोई विचार नहीं होता। वे तो सब भक्तों पर समान रूप से कृपा करती हैं। अतः आपको कोई ऐतराज नहीं होना चाहिए।" इस पर पण्डितों ने आपस में विचार करके कहा–"यदि महारानी तारामती तुम्हारे जागरण में पधारें तो हम भी स्वीकार कर लेंगे।"

यह सुनकर रुक्को महारानी तारामती के पास गई और सब वृत्तान्त कह सुनाया।

यह सुनकर रुक्को महारानी तारामती के पास गई और सब वृत्तान्त कह सुनाया।

तारामती ने जागरण में शामिल होना सहर्ष स्वीकार कर लिया। जिस समय रुक्को पण्डित से यह कहने गई कि महारानी जागरण में आएंगी, उस समय सैना नाई ने यह सुन लिया और महाराज हरिश्चन्द्र को जाकर सूचना दी।

राजा ने सैना नाई से सब बात सुनकर कहा कि तेरी बात झूठी है। महारानी हरिजनों के घर जागरण में नहीं जा सकती। फिर भी परीक्षा लेने के लिए राजा ने रात को अपनी उंगली पर थोड़ा चीरा लगा लिया, जिससे नींद न आए। रानी तारामती ने जब यह देखा कि जागरण का समय हो रहा है, परन्तु महाराज को नींद नहीं आ रही है तो उसने माता वैष्णो से मन-ही-मन प्रार्थना की कि–"हे माता ! आप किसी उपाय से राजा को तुरन्त सुला दें, ताकि मैं आपके जागरण में सम्मिलित हो सकूँ।"

राजा को नींद आ गई। रानी तारामती रोशनदान से रस्सी बाँधकर महल से उतरी और रुक्को के घर जा पहुँची। उस समय जल्दी के कारण रानी के हाथ का रेशमी रुमाल तथा पाँव की एक पायल रास्ते में गिर गई। उधर थोड़ी देर बाद राजा हरिश्चन्द्र की नींद खुल गई। तब वह रानी का पता लगाने के लिए निकल पड़ा। मार्ग में पायल और रुमाल उसने देखे और जागरण वाले स्थान पर जा पहुँचा। राजा ने दोनों चीजें रास्ते से उठाकर अपने पास रख लीं और जहाँ जागरण हो रहा था, वहाँ पर एक कोने में चुपचाप बैठकर सब दृश्य देखने लगा।

जब जागरण समाप्त हुआ तो सबने माता की आरती व अरदास की। उसके बाद

प्रसाद बाँटा गया। रानी तारामती को जब प्रसाद मिला तो उसने झोली में रख लिया। यह देखकर लोगों ने पूछा कि आपने प्रसाद क्यों नहीं खाया। यदि आप प्रसाद नहीं खायेंगी तो कोई भी नहीं खायेगा। रानी बोली–"तुमने जो प्रसाद मुझे दिया वह मैंने महाराज के लिए रख लिया। अब मुझे मेरा प्रसाद दे दो।" अबकी बार प्रसाद लेकर तारा ने खा लिया। उसके बाद सब भक्तों ने माता का प्रसाद खाया।

इस प्रकार जागरण समाप्त करके प्रसाद खाने के पश्चात् रानी तारामती घर की ओर चली। तब राजा ने आगे बढ़कर रास्ता रोक लिया और कहा–"तूने नीचों के घर का प्रसाद खाकर अपना धर्म नष्ट कर लिया है। अब मैं तुझे अपने घर में कैसे रखूँ। तूने तो कुल की मर्यादा, मेरी प्रतिष्ठा का भी ध्यान नहीं रखा। जो प्रसाद तू अपनी झोली में रखकर मेरे लिए लाई है, उसे खिलाकर मुझे भी अपवित्र बनाना चाहती है।" ऐसा कहते हुए जब राजा ने झोली की ओर देखा तो भगवती की कृपा से प्रसाद के स्थान पर उसमें चम्पा, चमेली, गेंदे के फूल, कच्चे चावल, सुपारी, मखाने, छुआरे, नारियल दिखाई दिए। (इस प्रसाद को ही बाँटे का प्रसाद कहते हैं) राजा हरिश्चन्द्र रानी तारा को लेकर साथ लौट आया। वहाँ रानी ने ज्वाला मैया की शक्ति से बिना माचिस या चकमक पत्थर की सहायता लिए राजा को अग्नि प्रज्वलित करके दिखाई जिसे देखकर राजा का आश्चर्य और बढ़ गया। राजा के मन में देवी के प्रति विश्वास व श्रद्धा जाग उठी। इसके बाद राजा

ने रानी से कहा–"मैं माता के प्रत्यक्ष दर्शन करना चाहता हूँ।" रानी बोली–"प्रत्यक्ष दर्शन करने के लिए बहुत बड़ा त्याग होना चाहिए। यदि आप अपने पुत्र रोहित की बलि दे सकें तो आपको दुर्गा देवी के प्रत्यक्ष दर्शन प्राप्त हो सकते हैं।" राजा के मन में देवी के दर्शन करने की लगन हो गई थी। राजा ने पुत्र का मोह त्याग कर रोहित का सिर देवी को अर्पण कर दिया। ऐसी सच्ची श्रद्धा एवं विश्वास देख दुर्गा माता सिंह पर सवार होकर उसी समय प्रकट हो गईं और राजा हरिश्चन्द्र माता के दर्शन करके कृतार्थ हुए। मरा हुआ पुत्र भी जीवित हो गया। उन्होंने विधिपूर्वक माता का पूजन करके अपराधों की क्षमा माँगी। सुखी रहने का आशीर्वाद देकर माता अन्तर्धान हो गईं।

राजा ने तारामती की भक्ति की प्रशंसा करते हुए कहा–"हे तारा ! मैं तुम्हारे आचरण से अति प्रसन्न हूँ। मेरे धन्य भाग्य जो तुम मुझे पत्नी के रूप में प्राप्त हुई हो।" इसके पश्चात राजा हरिश्चन्द्र ने भव्य मन्दिर तैयार करवाया। रानी तारा देवी एवं रुकमण दोनों मनुष्य योनि से छूटकर देवलोक को प्राप्त हुईं।

माता के जागरण में तारा रानी की इस कथा को जो मनुष्य भक्ति-भाव से पढ़ता या सुनता है उसकी सभी मनोकामनाएं पूर्ण होती हैं, सुख एवं समृद्धि बढ़ती है। शत्रुओं का नाश एवं सर्वमंगल होता है। इस कथा के बिना जागरण सम्पूर्ण नहीं माना जाता।

॥ जयकारा शेरावाली का, बोल सांचे दरबार की जय ॥

श्री दुर्गा जी की आरती

जय अम्बे गौरी मैया जय श्यामा गौरी। तुमको निशि दिन ध्यावत हरि ब्रह्मा शिवरी ॥ टेक ॥
मांग सिंदूर विराजत टीको मृगमद को। उज्ज्वल से दोउ नैना चन्द्रबदन नीको ॥ जय०॥
कनक समान कलेवर रक्ताम्बर राजै। रक्तपुष्प गलमाला कंठन पर साजै ॥ जय०॥
केहरि वाहन राजत खड्ग खप्परधारी। सुर-नर मुनिजन सेवत तिनके दुःखहारी ॥ जय०॥
कानन कुंडल शोभित नासाग्रे मोती। कोटिक चन्द्र दिवाकर राजत सम ज्योति ॥ जय०॥
शुम्भ निशुम्भ विडारे महिषासुर घाती। धूम्र विलोचन नैना निशि दिन मदमाती ॥ जय०॥
चण्ड मुण्ड संहारे, शोणितबीज हरे। मधु कैटभ दोउ मारे, सुर भयहीन करे ॥ जय०॥
ब्रह्माणी, रुद्राणी तुम कमलारानी। आगम-निगम बखानी, तुम शिव पटरानी ॥ जय०॥
चौंसठ योगिनी गावत नृत्य करत भैरूं। बाजत ताल मृदंगा अरु बाजत डमरू ॥ जय०॥
तुम हो जग की माता तुम ही हो भर्ता। संतन की दुःखहर्ता सुख सम्पत्तिकर्त्ता ॥ जय०॥
भुजा चार अति शोभित खड्ग खप्परधारी। मनवांछित फल पावत सेवत नर नारी ॥ जय०॥
कंचन थार विराजत अगर कपूर बाती। श्री मालकेतु में राजत कोटि रतन ज्योति ॥ जय०॥
श्री अम्बेजी की आरती जो कोई नर गावै। कहत शिवानंद स्वामी सुख-सम्पत्ति पावै ॥ जय०॥

श्री अम्बा जी की आरती

अम्बे तू है जगदम्बे काली, जय दुर्गे खप्पर वाली, तेरे ही गुण गायें भारती।
ओ मैया हम सब उतारें तेरी आरती।
तेरे भक्त जनों पर माता भीड़ पड़ी है भारी।
दानव दल पर टूट पड़ो मां करके सिंह सवारी।
सौ-सौ सिंहों से है बलशाली अष्ट भुजाओं वाली।
दुखियों के दुखड़े निवारती। ओ मैया हम सब उतारें तेरी आरती।
मां बेटे का है इस जग में बड़ा ही निर्मल नाता।
पूत कपूत सुने हैं पर ना माता सुनी कुमाता।
सब पर करुणा दरशाने वाली अमृत बरसाने वाली।
दुखियों के दुःख को निवारती। ओ मैया हम सब उतारें तेरी आरती।
नहीं मांगते धन और दौलत ना चांदी ना सोना।
हम तो मांगें मां तेरे मन में एक छोटा सा कोना।
सबकी बिगड़ी बनाने वाली लाज बचाने वाली।
सतियों के सत को संवारती। ओ मैया हम सब उतारें तेरी आरती।

श्री विन्ध्येश्वरी देवी जी की आरती

सुन मेरी देवी पर्वत पासिनी तेरा पार न पाया ॥ टेक ॥
पान सुपारी ध्वजा नारियल ले तेरी भेंट चढ़ाया ॥
सुवा चोली तेरे अंग विराजे केशर तिलक लगाया ॥
ब्रह्मा वेद पढ़े तेरे द्वारे शंकर ध्यान लगाया ॥
नंगे-नंगे पग तेरे अकबर आया, सोने का छत्र चढ़ाया ॥
ऊँचे-ऊँचे पर्वत बन्यो शिवाला नीचे शहर बसाया ॥
कलियुग द्वापर त्रेता मध्ये कलियुग राज बसाया ॥
धूप दीप नैवेद्य आरती मोहन भोग लगाया ॥
[illegible] तेरा गुण गावे मनवांछित फल पाया ॥

छ [illegible] ा तेरा गुण गावे मनवांछित फल पाया ॥

प्रस्तुत पुस्तक में

दुर्गा पूजा पाठ विधि तथा सामग्री, प्रार्थना, देवी कवच, श्री अर्गला स्तोत्र, श्री कीलक स्तोत्र, रात्रि सूक्त, देवी सूक्तम्, अपराध क्षमापन स्तोत्र, सिद्ध कुंजिका स्तोत्र, नवरात्रों में कन्या पूजन, माँ का भोग, श्री दुर्गा चालीसा, श्री विन्ध्येश्वरी चालीसा, विन्ध्येश्वरी स्तोत्र, आरती श्री दुर्गा जी की आरती बहुत ही सुन्दर और सरल रुप में प्रस्तुत की है

भेंट कर्ता :-

मूल्य:

40/-

PUBLISHED BY : MAHALAXMI PUBLICATION, DELHI-6 (INDIA)